



॥ श्रीः ॥

महावाक्यविवरणम् ।

(भाषाटीकासमेतम्)

श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीशङ्कराश्रमयतिवर्यैर्विरचितम् ।

व्याघ्रचर्माम्बरीणस्वामिरामकृष्णानन्दगिरिविरचितया भाषाटीकया समलंकृतम् ।

तदेतत्

खेमराज श्रीकृष्णदासश्रेष्ठिना

मुम्बय्यां

स्वकीये "श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) यन्त्रालये

मुद्रयित्वा प्रकाश्यते ।

चैत्र संवत् १९६०, शके १८२५.



प्रस्तावना ।

प्राणीमात्र सुख (परमानन्दकी प्राप्ति) और दुःख (सर्व अनर्थकी निवृत्ति) रूप मोक्षकी इच्छा करते हैं परन्तु यह इच्छा आत्मज्ञानके विना अन्य किसी उपायसे परिपूर्ण नहीं होसकती और आत्मज्ञान मनुष्यके अतिरिक्त अन्य प्राणियों को नहीं होसकता. यद्यपि दुःखकी निवृत्ति और सुखकी प्राप्ति सबको अभीष्ट है. इसकारण अन्यप्राणियोंमें भी मुमुक्षुता सम्भवित है तथापि मनुष्यकेअतिरिक्त अन्यको आत्मज्ञानकी योग्यता हैहीनहीं इसलिये अन्यप्राणी आत्मज्ञानसम्पादनमें असमर्थ हैं और मनुष्य समर्थ हैं अतएव मनुष्यमात्रको आ॰ ज्ञानका सम्पादन अवश्य कर्त्तव्य हैं. वह आत्मज्ञान दो प्रकारका है एक परोक्ष और दूसरा अपरोक्ष. वेदान्तके आवान्तरवाक्योंके श्रवणसे परोक्षज्ञान होता है और महा-वाक्योंके श्रवणसे अपरोक्ष. सो दोनों प्रकारके वाक्य वेदचतु-ष्टयीके अन्तर्गत हैं और उन वाक्योंके विवेचनका परमकृपालु श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य श्रीशङ्कराचार्यजी महाराजके शिष्यानुशिष्य स्वामि श्रीशङ्कराश्रमजीने संस्कृतगद्यात्मक 'महावाक्यविवरण' नामक ग्रन्थ बनाकर अति अनुग्रह किया है परन्तु इसका रसास्वादन संस्कृतके विनापढ़े सर्वसाधरणको दुर्लभ है ये समझ हमने व्याघ्रचर्म्माम्बरीण विद्याविनोदाशुकवि

व्याकिरणाचार्य स्वामि रामकृष्णानन्दगिरिजीसे सरल हिन्दीमें टीका कराकर ऊपर संस्कृत गद्यात्मक मूल और नीचे सरल हिन्दीभाषामें टीकासहित निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" प्रेसमें छापके प्रसिद्ध किया, यद्यपि इसग्रन्थमें पुनरुक्ति विशेष हैं तथापि वे स्थूणाखननन्यायसे मुमुक्षुजनोंको ग्रन्थका भूषण प्रतीत होवेगा और एक अर्थको वारंवार अवलोकन कराकर निदिध्यासनको दृढ करेंगे मूलमें पुनरुक्ति होनेके कारण टीकामें भी पुनरुक्तियां मूलके अनुसारही हुई हैं अतः टीकाकार अपनी पुनरुक्तियोंका पाठकोंसे क्षमा प्रार्थी हैं इति शम्.

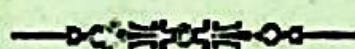
खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) यन्त्रालयाध्यक्ष-बंबई.



॥ श्रीः ॥

अथ महावाक्यविवरणम् ।

भाषाटीकासमेतम् ।



अथात्ममहावाक्यार्थविवरणं कथयति समस्तविषयवासनाविनिर्मुक्तः स परमहंसः । केवलनिर्विशेषब्रह्मचिन्तनमात्रेणावतिष्ठते स परमहंसः ॥

अब आत्मा और महावाक्योंके अर्थोंका विवरण विवेचन) करते हैं कि, समस्त विषयोंकी वासनासे त केवल निर्विशेष ब्रह्मचिन्तनमात्रमें स्थित पुरुष परमरपदको प्राप्त होता है ।

यत्र कुत्र तिष्ठति । किङ्करोति । केवलद्वादशमहावाक्यविवरणङ्करोति । किं विवरणङ्कोविचारस्तन्महावाक्यं कीदृशं तत्रोपयादपति वाक्यानि ॥

और प्रारब्धानुसार जिस किसी स्थानमें निवासकर केद्वादश महावाक्योंका विवेचन करता है कि, विवरण है विचार क्या है और महावाक्य कैसे हैं इसकेलिये थकार महावाक्योंका उपादान करते हैं ।

आदौऋग्वेदस्य-प्रज्ञानमानन्दं ब्रह्म, अहं ब्रह्मास्मीति यजुर्वेदस्य तत्त्वमसीति सामवेदस्य,

अयमात्मा ब्रह्मेति अथर्ववेदस्य । अहं ब्रह्मास्मीति यत्परंब्रह्मेत्यादिमहावाक्यैर्ब्रह्मविचारः ॥

जिसमें पहिले ऋग्वेदका महावाक्य "प्रज्ञानमानन्दं ब्रह्म" है और " अहं ब्रह्मास्मि " ये यजुर्वेदका महावाक्य है और "तत्त्वमसि" सामवेदका और "अयमात्मा ब्रह्म" य अथर्वणवेदका है 'अहं ब्रह्मास्मि' और 'यत्परं ब्रह्म इत्यादि महावाक्यों करके ब्रह्मका विचार कर्त्तव्य है ।

तत्रादौ ऋग्वेदेप्रज्ञानशब्दस्यव्याख्यानं क्रियते । एकमेवाद्वितीयं ब्रह्मेति सिद्धान्तः प्रज्ञानं स्वतश्चैतन्यं तद्विशेषा अनेकप्रकारास्तन्मध्ये यथाबुद्ध्यनुसारेण व्याख्यानं क्रियते ॥

उनमेंसे पहिले ऋग्वेदके ब्रह्म और प्रज्ञान शब्दका व्याख्यान करते हैं । कि "एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म" ब्रह्म एक और अद्वितीय है ये सिद्धान्त है प्रज्ञान नाम स्वतः चेतनका, उसके विशेष यद्यपि अनेक हैं तथापि उनमें यथाम व्याख्यान करता हूँ ।

प्रकृष्टं उत्कृष्टं ज्ञानं प्रज्ञानं उपाधिरहितं स्वतश्चैतन्यं कालत्रयरहितं अवस्थात्रयरहितंय बन्धमुक्तं स्वतन्त्रं ज्ञानं तत्प्रज्ञानं नाम ॥

अतिशयकरके उत्कृष्ट जो ज्ञान है उसका नाम प्रज्ञान

अर्थात् उपाधिरहित स्वयं चेतन भूत भविष्यत् वर्त्तमान कालत्रयशून्य जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति ये तीनों अवस्थाओंसे रहित विशेषकरके मुक्तस्वरूप स्वतंत्र जो ज्ञान है उसीका नाम प्रज्ञान है ।

यज्ज्ञानेन तु मायाचैतन्यं भवति यज्ज्ञानेन चतुर्विंशतितत्त्वचैतन्यं भवति । किमिदंसूर्याच्चक्षुरिव अग्निपात्रमिव चुम्बकलोहमिव सूत्रधारचित्रमिव काष्ठाग्निरिव पुरुषच्छायेव वातरेणुरिव धनुर्धरबाण इव वृक्षच्छायेव ॥

जिस ज्ञानसे माया चैतन्य है और जिस ज्ञानसे चौवीस तत्त्व चैतन्य हैं. जिसकी नाई जैसे सूर्यसे चक्षु चैतन्य है और अग्निसे पात्र, चुम्बकसे लोहा, सूत्रधारसे चित्र और जैसे काष्ठसे अग्नि, पुरुषसे छाया, वायुसे धूल और धनुर्धारीसे बाण और जैसे वृक्षसे छाया चैतन्य हैं ।

अमुना प्रकारेण परापश्यन्तीमध्यमावैखरीरूपेण चैतन्यं समस्तजगत्प्रपञ्च उत्पद्यते । ज्ञानशक्तीच्छाशक्तिक्रियाशक्तिस्वरूपेण चैतन्यं जगदाकारं भवति ॥

इसीप्रकारसे परा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी स्वरूपसे चैतन्यही समस्त जगत् प्रपञ्चरूपसे उत्पन्न होता है ज्ञानशक्ति और इच्छाशक्ति क्रियाशक्तिस्वरूपसे चैतन्य जगत्के आकारको धारण करता है ।

अत एव वासुदेवः परब्रह्मेति श्रुतिः। वसन्त्यस्मिन् भूतानि वासुः। वासुश्चासौ देवश्च वासुदेवः। प्रज्ञान शब्देनोच्यते।भूतानां वसतेः। अत एव वासुदेव उच्य

इसीलिये "वासुदेवः परब्रह्म" वासुदेव परब्रह्म है य श्रुति भगवत्की आज्ञा है जिसमें प्राणी निवास करे उस नाम 'वासु' है और जो प्रकाशमान हो उसका नाम 'देव' अर्थात् जो प्राणियोंका निवासस्थान हो और प्रकाशम हो उसका नाम 'वासुदेव' है प्रज्ञाशब्दसेभी प्राणियों निवास माना है अतएव प्रज्ञाको वासुदेव कहते हैं।

वाक्पाणिपादपायूपस्थाख्यानि पञ्चकर्म्मेन्द्रियचतुष्टयान्तःकरणप्रेरकःअत एव निर्गतान्तः करणेन श्रोत्रद्वारेण शब्दग्रहणं करोति, निर्गतान्तःकरणेन चक्षुर्द्वारेण रूपग्रहणं करोति, निर्गतान्तःकरणेन नासिकाद्वारेण गन्धग्रहणङ्करोति, निर्गतान्तःकरणेन जिह्वाद्वारेण रसग्रहणं करोति, निर्गतान्तःकरणेन त्वग्द्वारेण स्पर्शग्रहणङ्करोति ॥

वाणी, हस्त, पाद, गुदा, लिङ्ग-नामक ये पञ्चकर्मेन्द्रि मन बुद्धि चित्त अहंकार इन चारोंके समुदायरूप अन्तःक णका प्रेरक है निर्गतान्तःकरण अर्थात् विषयके साथ सं रखनेमें समर्थ अन्तःकरणसंयुक्त कर्णद्वारा शब्दका ग्र

करता है, निर्गत अन्तःकरणसंयुक्त चक्षुसे रूप और नासिकासे गन्ध, जिह्वासे रस और चर्म्मसे स्पर्शका ग्रहण करता है।

अत एव श्रोत्रं त्वक् चक्षुर्जिह्वाघ्राणमिति पञ्चज्ञानेन्द्रियप्रेरकः पञ्चकर्मेन्द्रियप्रेरकः मनोबुद्धिरहंकारश्चित्तमित्यन्तःकरणप्रेरकः प्राणापानव्यानोदानसमानाः नागकूर्मकृकरदेवदत्तधनञ्जयाश्चेति भेदेन द्विविधपञ्चवायुप्रेरकः ॥

अतएव श्रोत्र, त्वचा, घ्राण, चक्षु, जिह्वा इन पञ्च ज्ञानेन्द्रियोंके प्रेरणा करनेवाले और वाक्, हस्त, पाद, गुदा, लिङ्ग इन पांच कर्मेन्द्रियोंके प्रेरक और मन, बुद्धि, चित, अहंकार इन चारोंके समुदायरूप अन्तःकरणके प्रेरक, प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, पांच ये और नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त, धनंजय, ये पांच इन दोनों भेदविशिष्ट सर्वके प्रेरक वायु हैं।

समस्तप्रपञ्चोत्पत्तिप्रलयंचकरोति । जगत्साक्षित्वेन पश्यति। तत्प्रज्ञाननामधेयं भवति॥

पूर्वोक्त समस्त प्रपञ्चकी उत्पत्ति और प्रलयका कर्त्ता जगत्को साक्षिरूपसे देखनेवाला प्रज्ञाननामक ब्रह्म है सोई विद्यारण्यस्वामीने भी पञ्चदशीमें कहा है कि, "येनेक्षते शृणोतीदंजिघ्रति व्याकरोति च ॥ स्वाद्वस्वादू विजानाति तत्प्रज्ञानमुदीरितम्" जिसकरके देखता है सुनता है. सूंघता है और

ग्रहण करता है, स्वादिष्ठ और अस्वादिष्ठ जानता है उसको
प्रज्ञान शब्दवाच्य कहते हैं ।

तस्मात् प्राज्ञानशब्देन ब्रह्म विशेषण सर्वेश्वरःकथ्यं
इसीकारण प्रज्ञानशब्दवाच्य ब्रह्मविशेष जगन्नियन्ता
सर्वेश्वर कहाता है. और पञ्चदशीमेंभी कहा है कि
"चतुर्मुखेन्द्रदेवेषु मनुष्या श्वगवादिषु ॥ चैतन्यमे
ब्रह्मातः प्रज्ञानं ब्रह्मम्यपि" ब्रह्मा, इन्द्र, देव आदि
और मनुष्य, अश्व, गो आदिमें जगत्के उत्प
प्रलयका कारण एक चैतन्य ब्रह्म है अतएव प्रज्ञान ब्रह्म में
भी है क्योंकि, प्रज्ञानके अतिरिक्त कोई प्राणी पदार्थ अ
शिष्ट नहीं है ।

तत्सूत्रधार ईश्वरः मायाऽविद्यानटीनृत्यङ्कारय-
ति नट इव । इति ऋग्वेदे प्रज्ञानशब्दार्थनिर्णयः
प्रथमः सिद्धान्तः ॥ १ ॥

वो सूत्रधाररूपी ईश्वर माया और अविद्यारूपी नटी
नटकी नाईं नचाता है यह ऋग्वेदमें प्रज्ञानशब्दके निर्णय
प्रथम सिद्धान्त है ।

अतः परमानन्दशब्दार्थनिर्णयः कथ्यते ॥

ग्रन्थकार इसके अनन्तर परमानन्दशब्दके अर्थका नि
करते हैं ।

आनन्दं ब्रह्मेति व्यजानात्, आनन्दाद्ध्येव ख-

ल्विमानि भूतानि जायन्ते,आनन्देन जातानि जीवन्ति, आनन्दं प्रयन्ति, अभिसंविशन्तीतिश्रुतेः ॥

आनन्दको ब्रह्म जानो आनन्दहींसे पृथिवी,जल,तेज,वायु, आकाश उत्पन्न होते हैं और आनन्दसे जीते हैं आनन्दमेंही लय होते हैं और प्रवेश करते हैं यह श्रुतिप्रमाण है ।

स्वस्वरूपमुपाधिरहितमानन्दङ्करोति यदानन्दंभवति तदाहमित्यात्मानन्दं भवति। तथा अखण्डानन्दं निजबोधानन्दं कैवल्यानन्दं सहजानन्दं अच्युतानन्दं रामानन्दं वीर्यानन्दं सुखानन्दं आनन्दव्यापकानन्दं श्र्यानन्दं प्रकाशानन्दं भवति ॥

उपाधिरहित अपने स्वरूपको आनन्दित करता है जब आनन्द होता है तब 'अहं' इस आत्माके आनन्दको अनुभव करता है और अखण्डानन्द निजबोधानन्द कैवल्यानन्द सहजानन्द अच्युतानन्द रामानन्द वीर्यानन्द सुखानन्द आनन्दव्यापकानन्द, श्र्यानन्द, प्रकाशानन्द, प्रभृतिपदोंको धारण करता है ।

यद्यादाकाशआनन्दो न स्यात्तर्हि प्राणस्यानन्दत्वं कथं संभवति जडत्वात् ॥

जिसकारण आकाश आनन्द नहीं है इसीहेतु प्राणको भी आनन्दत्व नहीं होसक्ता, क्योंकि प्राण आकाशकी नाईं जड है ।

अत एव ब्रह्मानन्देन जगदानन्दो भवति। ब्रह्मानन्दं लब्ध्वा ऋतमानन्दो भूत्वेति श्रुतेः। समस्तप्रपञ्चातीतानन्दःयआनन्दः सत्तामात्रेण समस्तप्रपञ्चमानन्दयति ॥

इसीवास्ते ब्रह्मानन्दसे जगदानन्द होता है जिसमें श्रुति प्रमाण है "ब्रह्मानन्दं लब्ध्वा ऋतमानन्दो भूत्वेति श्रुतेः ब्रह्मानन्दको प्राप्त होकर सत्यआनन्द होता है अर्थ समस्त प्रपञ्चसहित जो आनन्द है सोई आनन्द सम जगत्प्रपञ्चको आनन्दित करता है।

अतएवान्नमयप्राणमयमनोमयविज्ञानमयानन्दमया इति पञ्चकोशात्मको जीवः आनन्दं प्राप्नोति। सच्चिदानन्दस्वरूपं परमात्मेति कथ्यते ॥

अतएव अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, औ आनन्दमय इन पञ्चकोशात्मक जो जीव है सो आनन्द प्राप्त होता है और सत् चित् आनन्दस्वरूप परमात्मा कह जाता है।

इत्थं परमात्मानन्दसत्तामात्रेण मूलप्रकृतेरानन्दप्राप्तिर्भवति। तत्कार्यं महदादिचतुर्विंशतितत्त्वानि स्त्रीलिङ्गपुल्लिङ्गरूपेण मिथुनीभवंति अत्यन्तमानन्दयति ॥

इसीप्रकार परमात्मानन्दकी सत्तामात्रसे मूलप्रकृति अर्थात् माया आनन्दको प्राप्त होती है और उस मायाका कार्य आकाश आदि और चौवीस तत्त्व स्त्रीलिङ्ग पुल्लिङ्ग रूपसे परस्पर मिल अत्यन्त आनन्दको प्राप्त हैं।

अतएव वैकुण्ठादिशेषनागपर्यन्तं समस्तजीवजातिदेवदैत्यसिद्धगंधर्वमुनियक्षतिर्यङ्नागकीटपतङ्गस्थावरजङ्गमसमस्ताशिवशक्त्यात्मको भवतीति सत्यम् ॥

इसीकारण वैकुण्ठसे आदिले शेष नागपर्यंत समस्त जीवजाति देव, दैत्य, सिद्ध, गन्धर्व, मुनि, यक्ष, तिर्यक्, नाग, कीट पतङ्ग, स्थावर, जंगम, शिवशक्तिस्वरूपहैं यह सत्य है।

तस्मादेकाकी न रमते द्वितीयमिच्छति स एवात्मा द्विधा भवति पतिःपत्नी चेति ॥

इसीलिये एकाकी पुरुषके वलमेंही रमण करता दूसरेकी इच्छा करता है और वही आत्मा पति और पत्नी इस द्विविधरूपसे परिणत होता है ये श्रुतिमें भी लिखा है कि, "एकोऽहं बहुस्याम्" मैं एक अनेक होऊं।

अतएवात्मव्यतिरेकेण आनन्दं न संभवति जडपदार्थत्वात् ॥

इसीहेतु आत्माके अतिरिक्त यावत् पदार्थको जड होनेसे आनन्द नहीं होसकता।

स्थूलसूक्ष्मकारणमवस्थात्रयाच्चैतन्यं कैवल्यं ब्रह्म तुर्यावस्थामात्रमानन्दं संभवति अतएवानन्दं ब्रह्मेति सत्यम् ॥ इति ऋग्वेदानन्दशब्दव्याख्यानं द्वितीयःसिद्धान्तः ॥ २ ॥

स्थूल सूक्ष्म कारण अवस्थात्रय चैतन्य कैवल्य मोक्ष और ब्रह्मकी चतुर्थावस्थामात्र आनन्दरूपका अनु करती है अतएव आनन्द ब्रह्म है यह सत्य ठहरा यह ऋग्वे आनन्दशब्दके व्याख्यानका दूसरा सिद्धान्त समाप्त हुआ

अतः परं ब्रह्मशब्दनिर्णयः कथ्यतेः–

माया तु शेषनागपर्यन्तं समस्तप्रपञ्चान्वयरूपेणावतिष्ठते । किमिव । सूत्रे मणिगण इव यस्माज्जगदोतप्रोतं ततः ।

अब ब्रह्मशब्दके अर्थका विवेचन करते हैं–स्वामी शङ्क अम माया तो शेषनाग पर्य्यन्त समस्त जगत्प्रपञ्चमें संबन्धि होकर स्थित है किसकी नाईं जैसे सूतके मध्यमें मुनियोंनि समुदाय तद्वत् मायामें जगत् पिरोया हुआ है जैसे एक ता मालाके दाना जिसहेतु मायामें जगत् ओतप्रोत है इसीहे

अतः ब्रह्म सम्पूर्णदेशकालवस्तुस्वरूपं समस्तप्रपञ्चगुणदोषरहितं निर्लेपमच्छेद्यमक्लेद्यमभेद्यमदाह्यमशोष्यम् ॥

इसके आगे आत्माके स्वरूपका वर्णन करते हैं कि, समस्त वस्तुओंके संबंधसे तथा कालके संबंधसे और देशके संबंधसे रहित और देश, काल, वस्तु का स्वरूपभूत समस्त जगत् प्रपञ्चके गुणदोषोंसे रहित और कमलदलकी नाईं निर्लेप शस्त्रादिकों करके छेदन करनेमें अच्छेद्य, जलादिकोंसे जो न भीगसके पाषाण काष्ठ दण्डादिकोंसे जो भेदन नहोसके अग्नि आदिकोंसे दाहरहित और वायु आदिसे जिसका शोषण न होसके ऐसा आत्माका स्वरूप है श्रीमद्भगवद्गीतामें भी श्रीकृष्णचन्द्र परमात्माने कहाहै कि "अच्छेद्यो यमदाह्योयमक्लेद्योऽशोष्य एवच " अर्थ पूर्ववत् समझिये ।

समस्तेषु वस्तुष्वनुस्यूत्तमेकं समस्तानि वस्तुनि यन्नस्पृशति वियद्वत्सदा शुद्धमच्छस्वरूपम् । स नित्योपलब्धिस्वरूपोहमात्मा ॥

समस्तवस्तुओंके साथ जिसका संबंध है और कोइ वस्तु जिसको लिपायमान नहा करसकती आकाशकी नाईं शुद्ध निर्मल जिसका स्वरूप है और नित्य प्राप्त स्वरूप जो आत्मा है सो मै हूं ।

सदसत्संसारस्य असत्यता । प्रतिभासमानत्वात् । कइव । रज्जुसर्प इव शुक्तिरजतमिव सरसि फेनामिव नभोऽभ्रमिव ॥

सत् असत्रूप संसारकी सत्यता प्रातिभासिक है कि
तरह जैसे जेवरीमें सर्प, सीपमें चांदी, तालावमें फेन
आकाशमें मेघ प्रातिभासिक हैं तद्वत् ।

कूटशब्देन मिथ्यामाया आकाशवद्व्याप्त
समस्तप्रपञ्चान्तर्यामित्वेन तिष्ठति । यत्सत्ताय
जगत्सत्यताप्रतिभासमाना भवति ॥

कूटशब्दसे मिथ्यामायाको जानो अकाशके
व्याप्त समस्त जगत्प्रपञ्चमें अन्तर्यामीरूपसे स्थित है
की सत्तामें जगत्की सत्यता प्रातिभासिक होरही है ।

इति ऋग्वेदवाक्येब्रह्मपदार्थनिर्णय अवलोकनीय
काण्डत्रयं उपासनाकाण्डं कर्म्मकाण्डं ज्ञानका
प्रतिभाति वेदे । एतेन परमात्मा सत्यतया उल्लस

यह ऋग्वेदके वाक्यत्रयके पदोंका अर्थ अव
कीजिये और वेदमें मन्त्रकाण्ड, कर्म्मकाण्ड और ज्ञान
ये काण्डत्रय प्रतीत होते हैं इतने लिखनेसे परमा
सत्यता सर्वथा प्रसिद्ध है ।

पञ्चविंशतिः सहस्राणि ब्रह्मवाचो भवंति । विद्याश
क्तियुक्तपरापश्यन्तीमध्यमावैखरीस्वरूपेणअव्य
क्तंस्वरूपं व्यक्तस्वरूपेण प्रकटीकरोति ।
प्रकृतियोगे परा वाक् अव्यक्तरूपेण बुद्धिरहित
नादरहिताऽक्षररहिता केवलचैतन्यमात्रमुल्लसति

ब्रह्मवाणी पचीस हजार है. विद्याशक्ति करके युक्त परा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरीस्वरूपसे अव्यक्तस्वरूपको व्यक्त अर्थात् स्पष्टस्वरूपसे प्रगट करती है प्रकृतिके संयोगमें परा वाक् अव्यक्त अर्थात् अस्पष्टस्वरूपसे बुद्धि और नाद और नाशरहित केवल चैतन्यमात्रको स्पष्ट करती है।

सैव वाक् अन्तःकरणचतुष्टयवत्पुरुषसंयोगेन षड्जर्षभगांधारमध्यमधैवतनिषादपञ्चमात्मिका पराख्पा भवति। पश्यन्ती विचारज्ञानमयी परां प्रज्ञां विचारयम् उपकरोति । तेन विचारेण परब्रह्मप्राप्तिर्भवति ॥

वही वाणी, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार आत्मक अन्तःकरणसे पुरुषके संयोगमें षड्ज, ऋषभ, गांधार, मध्यम, धैवत, निषाद और पंचमस्वरूपा परा होती है. पश्यन्ती वाक् विचारज्ञानमयी है परा प्रज्ञाके विचारको उपकृत करती है जिसके विचारसे परब्रह्मकी प्राप्ति होती है।

अपरं संसारमतीत्य सैव वाक् नादमयपुरुषस्य संयोगेन मध्यमा वाक नादमयी भवति नादरूपेणोल्लसति ॥

और वही वाणी संसारको अतिक्रमणकर नादमयपुरुषके संयोगसे मध्यमा वाणी नादमयी है अर्थात् नादरूपसे प्रसिद्धहै।

स नाद आत्मसंयोगादग्निवायुभ्यामुपेत्य द्वाविंशतिव
महावाक्यश्रुतिरूपया वाचोल्लसन्तिति। तथाचोक्तं
वह नाद आत्माके संयोगसे अग्नि और वायुको प्राप्त
बाईस श्रुतिरूपसे वाचाऐसी प्रसिद्धिको प्राप्त है वहां प्रमाण
कहा है किः—

शब्दब्रह्मणि निष्णातः परं ब्रह्माधिगच्छति ॥ परब्र
ह्मप्रतिपादकतया शब्दब्रह्मसत्यं प्रतिपद्यते।
सा प्रज्ञा वैखरी वाक् ॥

शब्दब्रह्ममें जिसने स्नान किया है वह पुरुष परब्रह्मको
होताहै परब्रह्मका प्रतिपादन करनेवाला शब्द है अ
शब्दब्रह्मकी सत्यता प्रतिपादित है वो प्रज्ञारूपा वै
वाणी है।

केषांचिन्मतेन ईश्वरव्यतिरेकेण सर्वकर्त्तृत्वं अन्य
स्य न सम्भवति तद्व्यतिरिक्तस्य जडत्वं प्रतिपा
द्यते। तथा च श्रुतिः—

किसीका मत है कि,ईश्वरके अतिरिक्त सर्वकर्तृत्व अ
को नहीं है ईश्वरसे अतिरिक्त पदार्थमात्र जड हैं तो सर्वक
र्तृत्वकी शक्ति जडम कहांसे वहां श्रुति प्रमाण है किः—

स एवजीवो विचारप्रसूतिः प्राणेन घोषेण गुहा
प्रविष्टो मनोमयं सूक्ष्ममुपेति रूपं मात्रा स्वरो
वर्ण इति श्रुतिः।

वही जीव विचारकी संततिरूप प्राण घोषसंज्ञक प्राण के गुफामें प्रवेशकर मनोमय मनका किया वा मनसे संयुक्त अर्थात् लघुरूपको प्राप्त होताहै मात्रा स्वर और वर्ण रूपसे ।

ईश्वरस्य प्रथमं प्रथमश्वासनिर्गतः ॐकार इति स एवाकारादिषोडश स्वराः कक्कारादिपञ्चविंशति स्पर्शाः यकारादिदशानुस्वराश्च । एवं प्रथमबीजरूपसहिता द्विपञ्चाशद्वर्णात्मिका भवति वाणी ॥

ईश्वरके प्रथम श्वाससे पहिले ॐकार निकला फिर अकार आदिले सोलह स्वर और ककारसे आदिले पचीस स्पर्श कारसे आदि दश अनुस्वार निकले इसीतरह प्रथम बीज कार सहित ५२ वर्णात्मक वाणी हुई ।

तदनन्तरं छन्दोमयं भवति । ऋग्वेदोयजुर्वेदः सामवेदोथर्वणवेदइति चत्त्वारो वेदा भवन्ति ॥

वही वाणी तत्पश्चात् छन्दोबद्ध हुई और ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्वणवेद ये चार वेद हुए ।

एतेभ्यः सर्वेभ्यो वेदेभ्य एवञ्चतुर्दशविद्या भवन्ति ॥

इन समस्त चारवेदोंसे ऐसे चतुर्दश १४ विद्या उत्पन्न हुई विद्याये हैं ।

ताश्चपुराणन्यायमीमांसाधर्म्मशास्त्राङ्गमिश्रिता वेदाःस्थानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुर्दश-इ उपपुराणेतिहासेःउपवेदा धनुर्वेद आयुर्वेदो गांध वेदो मन्त्रवेदः न्यायाद्यैर्नानाप्रकाराश्चतुर्दशवि भवन्ति॥

विद्या और धर्म्मके चतुर्दश १४ स्थान हैं जैसे पु न्याय २ मीमांसा ३ धर्म्मशास्त्र ४ और अङ्ग अर्था क्षा कल्प निरुक्त छन्द ज्योतिष और व्याकरण ५ औ उपपुराण ७ इतिहास ८ उपवेद ९ धनुर्वेदादि नाना विद्या चतुर्दश (१४) हैं।

ताश्च विद्या ब्रह्मा चतुर्भिर्मुखैश्चत्वारो वेदान्निर रमभ्यस्यति ॥

उन चतुर्दशविद्याओंको ब्रह्मा निरन्तर अभ्यास और चारोंमुखसे चारों वेदोंका अभ्यास करते हैं।

पूर्वमुखेन ऋग्वेदं उत्तरमुखेन यजुर्वेदं पश्चिम खेन सामवेदं दक्षिणमुखेनाथर्वणवेदं तत्संबं अङ्गानि दर्शनानिचपठति ॥

जिनमें पूर्वमुखसे ऋग्वेदका अभ्यास,उत्तरमुखसे य पश्चिममुखसे सामवेदका और दक्षिणमुखसे अथर्वण और धर्म संबंधी अङ्ग और दर्शनोंका अभ्यास कर

नैय्यायिकदर्शनं दक्षिणमुखान्निर्गतम्।वेदान्त

नं पश्चिममुखान्निर्गतम् । सांख्यपातञ्जलदर्शनानि उत्तरमुखान्निर्गतानि ॥

ह्माके दक्षिणमुखसे न्यायशास्त्र निकला पश्चिममुखसे वेदा-
ास्त्र और उत्तरमुखसे सांख्यशास्त्र और योगशास्त्रनिकले ।

षड्दर्शनेषु भगवतः स्वरूपं ब्रह्म वासुदेवसङ्कर्ष-
णप्रद्युम्नानिरुद्ध इति चतुर्धा प्रतिपाद्यते ॥

न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, मिमासा और वेदान्त-
छहों शास्त्रोंमें भगवान्का वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और
नेरुद्ध ये कथन कियाहै यही चार प्रकारका ब्रह्म
तेपादित है ।

केचित् तत्र सगुणो वासुदेवो देवता, ऋग्वेदो वेदः,
सत्ययुगं, ब्राह्मणवर्णः, सात्विकगुणः, तपोनिष्ठा
इति नैयायिकदर्शनप्रामाण्यम् ॥

कोई कहते हैं कि, सगुण वासुदेव देवता है, वेद ऋग्वेदहै,
र सत्ययुग है और ब्राह्मण वर्ण है, सात्विक गुण है, तपमें
रत रहता है ये न्यायदर्शनका प्रमाण है ।

प्रणवजपः केवलज्योतिर्मयध्यानं सर्वं खल्विदं
ब्रह्मेति ज्ञाननिष्ठा । भेदोनास्ति । इति ऋग्वेदस्य
ब्रह्मशब्दनिर्णयस्तृतीयःसिद्धान्तः ॥ ३ ॥

प्रणव अर्थात् ॐकारका जप केवल ज्योतिर्मय ब्रह्म-

का ध्यान करना और "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" यह श्रु
कहती है कि, दृश्यमान समस्त जगत् प्रपञ्च ये ब्रह्म
ज्ञानका निश्चय और ब्रह्मके अतिरिक्त भेद कुछ
नहीं है यह वेदान्तदर्शनका सिद्धान्त है यहांपर्यंत श्रु
ब्रह्मशब्दका निर्णय समाप्त हुआ ।

अतःपरं यजुर्वेदसम्बन्धिवाक्यनिर्णयः कथ्यते
इसके अनन्तर यजुर्वेदसंबधी वाक्योंका निर्णय

अहं ब्रह्मास्मीति श्रुतिः ।

मैं ब्रह्म हूं यह श्रुतिका साधारणतः अभिप्राय है

अथाहंशब्दनिर्णयंवक्ष्यति । अहं जगत्कर्ता ।
जगद्धर्ता । अहं जगत्साक्षी । अहं जगत्प्रेरकः
अहं जगद्भोक्तेति श्रुतिः ॥

अब अहंशब्दका निर्णय कहते हैं श्रुतिमुखसे मैं ज
करनेवाला हूं और मैंही जगत्को प्रतिपालन करने
जगत्का साक्षी मैं हूं जगत्का प्रेरक और भोक्ता मैं

मय्येव सकलंजातं मयि सर्वं प्रतिष्ठितम् ॥ मयि
लयं याति तद्ब्रह्मास्म्यहमद्वयम्॥ इति श्रुतेर्वा
प्रमाणम् ॥

मेरेमेंही समस्त जगत्प्रपञ्च उत्पन्न हुआहै औ
स्थित है और मेरेमें सर्व लयको प्राप्त होताहै इसीलि
यब्रह्म मैं हूं यह श्रुतिके अनकूल प्रमाण हुआ ।

अहंशब्दो ब्रह्मणि रूढो भवति।"अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्त्तते" इति भगवद्वचनप्रामाण्यात्॥

अहंशब्द ब्रह्ममें रूढ़ है. मैं समस्तका उत्पत्तिस्थान हूं और मुझसे सर्व उत्पन्न होता है इस भगवद्वचनके प्रमाणसे ।

अहमेवासमेवाग्रे नान्यद्यत्सदसत्परम् ॥ पश्चादहं यदेतच्च योवशिष्येत सोस्म्यहम् ॥

अब अहंशब्दके अर्थका निरूपण करते हैं कि सृष्टिसे पहिले मैं था और सत् असत् कुछभी न था और सृष्टिके पीछेमें और दृश्यमान ये जगत् और जो कुछ अवशिष्ट बचेगा सो मैंहीहूं

इति सृष्ट्यादौ सृष्टिमध्ये सृष्ट्यन्ते पिसदेवास्ति ॥ निःसत्त्वम्प्रति पाद्यते इति भागवते ॥

जगत् उत्पत्तिसे पहिले और जगत्के मध्यमें और सृष्टिके अन्तमें ब्रह्महीकी केवल सत्ता प्रतिपादित है ये भागवतमें निरूपित है ।

अत एवाहंशब्देन विशेषेण ज्ञानमुच्यते।"मयिसर्व मिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणाइव" इत्युपनिषद्वाक्यप्रामाण्यात्॥

अत एव अहंशब्दसे विशेषज्ञान निर्णित हुआ जैसे तागे मालाके मनिया पिरोये रहते हैं उसी तरह ये समस्त जगत् प्रपञ्च मेरेमें इस उपनिषद्के वाक्यप्रमाणसे पोयाहुआ है ।

कथम् । स्वतश्चैतन्यात् । यत्र स्वतश्चैतन्यं तत्र स्वतः

प्रकाशत्वं स्वतन्त्रत्वं तत्रैवाहंशब्दः संभव अन्यत्र कुत्रापि न सम्भवति तद्व्यतिरेकेण ॥ स्थू प्रत्यक्षादिसमस्तपदार्था जडाः ॥

कैसे स्वतःचैतन्यसे जहाँ स्वतःचैतन्य है वहांही स्वयं प्रकाशता और स्वाधीनता है और अहंशब्दका भी वहांही है और कहीं नहीं संभव है उस चैतन्यके रिक्त स्थूल प्रत्यक्षसे आदि समस्त पदार्थ जड हैं.

अतएव मूलप्रकृतिस्तदात्मा चैतन्याभिमा भवति अहं ईश्वर इति मन्यते यदा तदाहंश प्रकृत्यारूढो भवति ॥

इसीलिये तब मूलप्रकृति (माया) आत्मासे चैत अभिमान करती है मैं ईश्वर हूं ऐसा मानती है तब शब्द प्रकृतिमें आरूढ होता है अर्थात् मायामय जगत् न्ता विराज मान होती है ।

स प्रकृत्या त्रिगुणात्मिकया युतो यदा भवति वो अहं शब्द सत्त्व, रज, तम, इन तीनों गुणों संयुक्त मायाके संयुक्त होता है ।

तदाहंशब्दः त्रिगुणात्मको भवति ॥

तब अहंशब्द सत्त्व, रज, तम त्रिगुणात्मक कहाजा

तत्र सत्त्वगुणात्मको विष्णुपदाभिमानं करोति

जोगुणात्मको ब्रह्माभिमानङ्करोति तत्र प्रकृतिकार्यं महत्तत्त्वाभिमानङ्करोति ॥

उनमें सत्वगुणविशिष्ट अहंशब्दको विष्णुके पदका अभि- होता है और रजोगुण विशिष्टको ब्रह्मा (प्रजापति) अभिमान होता है तिनमें प्रकृति (माया) का कार्य तत्त्वका अभिमान करता है ।

वासुदेवरूपेणमहत्तत्वकार्यमहङ्काराभिमानङ्करोति संकर्पणरूपेणाहंकारकार्यंचित्ताभिमानं करोति प्रद्युम्नरूपेण चित्तबुद्ध्याद्यभिमानं करोति अनि- रुद्ध रूपेण बुद्धिकार्याभिमानं करोति ॥

महत्तत्त्वका कार्य वासुदेवरूपसे अहंकारका अभिमान ता है और संकर्षणरूपसे चित्तका अभिमान और चित्त- म्नरूपसे कार्यबुद्धिका अभिमान करता है और अनिरुद्ध से बुद्धिके कार्यका अभिमान करता है ।

देवतादिरूपेण तत्कार्यंशब्दादिविषयाभिमानं करोति नादरूपशब्दस्पर्शरसरूपगन्धादिरूपे- ण तत्कार्यंज्ञानेन्द्रियाभिमानंकरोति प्रवृत्तिस्वरू- पेण तत्कार्यकर्म्मेन्द्रियाभिमानं करोति ॥

देवतादिरूपसे महत्तत्त्वका कार्य शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध- त्मक विषयका अभिमान करता है और नादरूपसे तथा ब्दस्पर्शादिरूपसे उसका कार्य ज्ञानेन्द्रिय अर्थात् श्रोत्र, त्वक्

चक्षुः, जिह्वा और नासिकाका अभिमान करता है
प्रवृत्तिस्वरूपसे उसकाकार्य हस्त, पाद आदि कर्म्म इन्द्रि
अभिमान क्रियारूपसे करता है ।

अतएव सदसदात्मकं जगत्स्थावरजंगमात्मं
कीटपतंगांडजस्वेदजजरायुजोद्भिज्जसमस्तजन्
श्चतुरशीतिलक्षयोनिं पृथक् पृथक् याति ॥

इसलिये सत् असत् आत्मक जगत् स्थावर वृक्ष
जंगम कीट (कीडे) पतङ्ग अण्डज (अंडोंसे पैदा
जीव) स्वेदज (पसीनेसे उत्पन्न होनेवाले लीख जूँआ
उद्भिज्ज (पृथिवीको फोडकर उत्पन्न होनेवाले तृण
समस्त जीवोंकी चौरासीलक्ष योनिको अलग अलग

यत्रस्वभावेन जगदभिमानो न जायते तत्सद्ब्रह्म
त्मकम्भवति ब्रह्मव्यतिरेकेण चैतन्यं न संभव
समस्तप्रपञ्चस्य जडत्वात्ततोऽभिमानोन संभ

स्वभावसे जगत्का अभिमान (अहञ्जगत्) इत्या
अभिमान नहीं होता स्वभावसे (तत् सत् ब्रह्म) वो
और ब्रह्म रूप है—क्योंकि विना ब्रह्मके चेतनताही
सकती सकल जगत् प्रपञ्चको जड होनेसे अतएव जगत्
श्चमें अभिमान नहीं होसकता ।

तस्याभिमाने नित्यत्वङ्कथं संभवति—अच्युतो
मनन्तोऽहं गोविन्दोहमहं हरिः ॥ आनन्दोहमशे

मजोहममृतोऽस्म्यहम् ॥ १ ॥ नित्योहं निर्विका
रोऽहं निरञ्जनोहं विशेषशून्यः परमात्मा इत्यादि
वाक्येनाहंशब्दप्रमाणम्भवति ॥

मैं अच्युत हूं अनन्त हूं गोविन्द हूं मैं हरि हूं मैं आनन्द हूँ
अशेष हूं और मैंही अजहूं और अमृत (अविनाशी)
॥ और नित्यहूं निर्विकारहूं और निरंजनहूं—इत्यादि श-
करके जगन्नियन्ता परमात्माका निरूपण कर अहंशब्द-
प्रमाणित करते हैं।

यथेश्वराभिमानो न सम्भवति तथा कर्तायष्टा ज्ञाता
भोक्तेत्यपि न सम्भवति ॥

जैसे ईश्वरको अभिमान नहीं संभवता तैसे कर्त्ता यष्टा ज्ञा
भोक्ता इत्यादिभी नहीं संभवते ।

जडत्वाप्राप्तेस्तथाभिमानःकुत्रापि न संभवति ।

जडत्व प्राप्तहुआ तैसा अभिमान कहीं नहीं होसकता।

यथा मृतकन्यायेन सच्चिदानन्दस्वरूपः परमात्मा
कथ्यते ॥

जैसे मृतकन्याय (मरेबाद निर्विकार जैसे होता है)
सत् चित् आनन्दस्वरूप परमात्मा कहाजाता है ।

चतुर्वेदप्रमाणम् । अहंशब्दो ब्रह्मवाचको भवति अ-
हंशब्दान्मायोपाधिरहितमव्यक्तस्वरूपमभिमन्यते ॥

इसमें चारों वेदोंका प्रमाण है इसीलिये अहं शब्द ब्रह्म-

का वाचक है अहं शब्दसे माया उपाधिरहित अव्यक्त
मैं हूं ऐसा मानता है ।

अन्तःकरणव्यक्तिङ्करोति परापश्यन्तीमध्यमा
वैखरीरूपेण प्रकटीकरोति अहंशब्दार्थनिर्णया
परमात्मा निर्विशेषेण कथ्यते ॥

और अन्तःकरणको स्पष्ट करता है परा पश्य
मध्यमा वैखरीरूपसे प्रगट करता है अहंशब्दके नि
परमात्मा विशेष कहाजाता है ।

तत्र प्रकृतिवादिनाम्मतेहंशब्दो ब्रह्माणि न सम्भ
ति। कथम्। आत्मानिर्गुणः शब्दस्तु गुणोऽनयो
परस्परंविरोधः ॥

उसमें प्रकृतिवादीके मतसे अहंशब्द ब्रह्ममें नहीं संभ
सकता कैसे शब्द इस गुणका और निर्गुणका परस्पर वि
अहंशब्देऽभिमानलक्षणं मोक्षबाधकं रूपं,उच्यते
त्कथं अहंशब्देन ब्रह्म संभवति इत्येका शङ्का।अ
द्वितीया शङ्का ब्रह्मैकं प्रपञ्चोऽनेकः कथं पृथक्
अहंशब्दमें अभिमान लक्षण मोक्षका बाधक रूप है
फिर कैसे अहंशब्दसे ब्रह्मका संभव होसकता है
आशङ्का और दूसरी आशंका कि, ब्रह्म एक है और
नाना है तो पृथक् कैसा?

अभिमानः संभवति यथानन्तघटेष्वनन्तजीव
संभवन्ति ॥

अब कहते हैं कि, अभिमान होसकता है जैसे नाना टोंमें अनन्त जीव उत्पन्न होते हैं तैसे—

केषाञ्चिदाचार्याणाम्मतेनैतत्सत्यत्वं सावधानमिति शृणु—

किसी किसी आचार्योंके मतसे इसको सत्यता सावधान अर्थात् यथार्थ है सो सुनिये ॥

यदि ब्रह्मणि अभिमानो नास्ति अतएव यत्र चैतन्यन्तत्रैवाभिमानत्वं संभवति अत्र ब्रह्म चैतन्यत्वस्वरूपम् ॥

जो ब्रह्ममें अभिमान नहीं है इसीलिये जहाँ चैतन्यता होती है वहीं अभिमानका संभव होता है यहां तो ब्रह्मका चैतन्यत्वस्वरूप है.

अतएवाहंशब्दवाच्यं ब्रह्मैव संभवति नान्यत्र कुत्रापीत्याशङ्का परिहृता । अथ द्वितीयाशङ्काम्परिहरति ब्रह्म तदेकं प्रपञ्चास्त्वनेकाः कथं पृथक् ॥

अतएव अहंशब्दका वाच्य ब्रह्मही है अन्यत्र अहं शब्दका प्रयोग नहीं होसकता ये आशंकाका परिहार हुआ अब दुसरी आशंका कि, ब्रह्म एक है और प्रपञ्च अनेक हैं कैसे अलग होसकता है इसका निवारण करते हैं—

अभिमानः संभवति ब्रह्म तदेकं तत्र दृष्टांतमाह यथा सूर्य एकश्चक्षुरनेकन्तत्प्रकाशं करोति ॥

अभिमान हो सकता है ब्रह्म एक है वहां दृष्टांत कहे कि, जैसे सूर्य एक है और चक्षु अनेक हैं पर एकही अनेक चक्षुओंको प्रकाशित करताहै.

यथाग्निरेकोऽनेकोपाध्युष्णत्वं करोति एकश्चन्द्रो ज्योत्स्नाअनेकाः सन्ति मृत्तिकैकैव घटास्त्वनेकाः सूर्य एकश्च रश्मयस्तु अनेका अग्निरेक एव स्फुलिङ्गा अनेकाः समुद्र एकश्च तरङ्गा बहवो बुद्बुदाश्चानेकाः--

और जैसे अग्नि एक है पर अनेक उपाधि उष्णता करे है और जैसे चन्द्र एक है और ज्योत्स्ना (चांदनी) अनेक है और मृत्तिका एकही है पर उससे घट अनेक उत्पन्न होते हैं और जैसे सूर्य एक है रश्मि (किरणों) अनेक हैं और अग्नि एक है पर स्फुलिंग (चिनगारी) अनेक हैं और समुद्र एक है पर तरङ्ग और बुद् बुदे अनेक उत्पन्न होते वैसेही ब्रह्म एक है उसमें प्रपञ्च अनेक हैं--

अमुना प्रकारेणैकमेव ब्रह्म मायामयमनेकं प्रपञ्चमनेकमभिमानमुत्थापयति ।

इसप्रकारसे एकही ब्रह्म अनेक मायाके प्रपञ्च और अभिमानको करताहै ।

देहाभिमानोत्पादकः स परमात्मा अहंशब्दवाच्योऽनन्तशक्तिरहंकारस्वरूपेण प्रपञ्चमनुवर्त्तते "तत्सृष्ट्वा तदेवानुप्राविशत्" इति श्रुतेः "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" इति श्रुतेश्च—

शरीरका अभिमान जैसे मैं क्षत्रिय हूँ ब्राह्मण हूँ वैश्य हूँ इत्यादि अभिमानको उत्पन्न करनेवाला वो परमेश्वर अहंशब्द-करके वाच्य अनन्तशक्ति अहंकारस्वरूपसे प्रपञ्चको प्राप्त होताहै, जिसमें श्रुति प्रमाण है कि,(तत्सृष्ट्वा तदेवानुप्राविशत्) वह परमात्मा जगत्को उत्पन्न करा आपही जगत्में प्रवेश करताहुआ प्रपञ्च(सर्वं खल्विदं ब्रह्म) और ये सकल ब्रह्म है।

इति पूर्वोक्ताशङ्का परिहृता॥यजुर्वेदिकाहंकारशब्द-निर्णयश्चतुर्थसिद्धान्तः ॥ ४ ॥

इतना कहनेसे पूर्वकी सर्व आशंका निवृत्त होगई ॥ इति यजुर्वेदके अहंकारशब्दके निर्णयका चतुर्थ सिद्धान्त ॥ ४ ॥

॥ अतः परं ब्रह्मनिर्णयः कथ्यते ॥

अब ग्रन्थकार ब्रह्म क्या पदार्थ है ? उसका विवेचन करते हैं ॥

बृहत्त्वाद्ब्रह्म तेन ब्रह्मशब्देन बृहत् अस्थूलं रूपं परमहंसतद्व्यापकस्वरूपं पूर्णं सर्वानुस्यूतं स्थूल-त्वादिगुणरहितं देशतः कालतश्चापरिमितम्म-र्य्यादारहितम् ॥

बृहत् (व्यापक वा महान्) होनेके कारण ब्रह्म र
जाताहै, उस ब्रह्मशब्दसे भारी और अस्थूल (सूक्ष्म)निर
परमहंस (जगत् प्रपञ्च और जीव ईश्वरके स्वरूपकी
मांसा करनेवाला) और व्यापकस्वरूप परिपूर्ण सर्व
पदार्थके साथ संबंधित स्थूल, कृश, सूक्ष्म, इत्यादि
करके रहित देश और काल करके जो प्रमाणमें न आउस
अर्थात् इस देशमें है और इसमें नहीं अथवा इस समयमें
और पहिले नहीं था इत्यादि व्यवहारशून्य मर्यादा (अ
रहित अर्थात् यहां पर्यन्त है और यहां नहीं, इस मर्या
रहित ॥

आकाशादितत्त्वानि येन पूर्णेनाकाशपूर्णता भवति तत्पूर्णतया पृथ्वीपूर्णता भवति तत्पूर्णतयापाम्पूर्णता भवति तत्पूर्णतया तेजःपूर्णता भवत्येवमाकाशादिसमस्तप्रपञ्चाधारभूतं बृहत्त्वाद्ब्रह्मेत्युच्यते "सर्वाधारो निराधार" इति श्रुतेः ॥

जिसकी पूर्णतासे आकाश, वायु, तेज, जल, पृथ्वी
तत्त्वोंकी पूर्णता है, अर्थात् जिस परमात्माकी शक्तिसे
स्त तत्त्व सत्तामान् प्रतीत होते हैं उसीको स्पष्ट करते हैं
जिसकी पूर्णतासे पृथ्वीकी और जलकी तेजकी पूर्णता
र्थात् व्यापकता है इसप्रकार आकाशादि समस्त प्रपञ्च
गत्का आधारभूत ब्रह्म है व्यापक होनेसे ब्रह्मशब्दवाच्य
रमेश्वर कहाता है देखिये श्रुति "सर्वाधारो निराधारः"

परमात्मा सर्वप्राणी पदार्थ जगत्प्रपञ्चका आधार है और निराधार है अर्थात् कमलपत्रके समान निर्लेप है ॥

यथा वृक्षच्छायायां वृक्षस्य सत्यता भवति तथे-श्वरसत्तायां भासमात्रायां जगत्सत्यत्वम्प्रतीयते॥

जैसे वृक्षकी छायामें वृक्षकी सत्ता अर्थात् सत्यता है, उसी प्रकारसे ईश्वरकी सत्ताकी प्रतीतिमें जगत्की सत्यता प्रतीत होती है ॥

अनन्तकोटिब्रह्माण्डप्रकाशकोऽनन्तकोटिब्रह्मा-ण्डप्रेरकोऽनन्तकोटिब्रह्माण्डांतर्वर्त्ती"स निर्लेपो-ऽत्यन्तसूक्ष्मात्सूक्ष्मतरम्"इति श्रुतेः ॥

और अनन्तकोड ब्रह्माण्डका प्रकाशक अनन्तकोड ब्रह्माण्डका प्रेरक असंख्य ब्रह्माण्डमें व्याप्त होरहा है, तिसमें श्रुति भी प्रमाण है, कि, " स निर्लेपोऽत्यन्तसूक्ष्मात्सूक्ष्म-तरमिति श्रुतेः ॥" वह परमात्मा कमलदलके समान निर्लेप और अति सूक्ष्म पदार्थसे भी सूक्ष्म है ॥

अत्र केवलानुभवः प्रमाणम्, प्रकाशरूपं स्व-चैतन्यस्वरूपेणाऽऽकाशवदखण्डदण्डायमानम् ॥

इसमें समाधि लक्ष्य और गुरु लक्ष्यसे और श्रवण मनन निदिध्यासनरूपसे प्राप्त किया जो निश्चय अनुभव है, वही प्रमाण है स्वयंप्रकाशरूप है, और स्वयं चेतनरूपसे आकाशके समान और अखण्ड दण्डके समान है, अर्थात् परमात्मा सर्वव्यापी और अनन्त है ॥

ऊर्ध्वाधस्तिर्यङ्मर्यादारहितं पूर्णं ब्रह्म केवलं मोक्ष स्वरूपं "समो नागेन समो मशकेन सम एभिस्त्रि भिर्लोकैः" इति श्रुतेः ॥

ऊपर है वा नीचे है या टेढा है, इस मर्यादासे रहित ब्रह्म केवल मोक्ष (मुक्त) स्वरूप है, तिसमें श्रुति प्रमा "समो नागेन समो मशकेन सम एभिस्त्रिभिर्लोकैः" प हाथी वा पर्वतके समान है और (मशक)मच्छरके स और इन तीनों लोकोंके समान हैं, अर्थात् जगदीश्वर छोटा और बडेसे बड़ा है, "अणोरणीयान्महतो मही अणु से अणु और बडेसे बड़ा है ॥

एवमनेन प्रकारेण ब्रह्मशब्दोऽखण्डानन्तस्वरू वाचको ब्रह्मशब्देन परमात्मा विशेषेण विज्ञायते यजुर्वेदसंबंधिब्रह्मशब्दनिर्णयः पञ्चमसिद्धान्तः॥

इस प्रकारसे ब्रह्मशब्द अखण्ड और अनन्तस्व वाचक है ब्रह्मशब्दसे परमात्माही जाना जाता है यजुर्वेदसंबंधी ब्रह्मशब्दके निर्णयका पञ्चम सि समाप्त ॥

अथ परमस्मिशब्दनिर्णयः कथ्यते ॥

इसके अनन्तर परं और अस्मिशब्दका निर्णय क अस्मिशब्देन युष्मदस्मत्प्रत्ययगोचरयोः स्व रूपयोर्मध्येऽस्मत्प्रत्ययगोचरस्वरूपमस्मिशब्द प्रत्येति ॥

अस्मिशब्दसे युष्मत् और अस्मत् प्रत्ययको विषय करनेवालेके मध्यमें अस्मत्प्रत्ययके विषयके स्वरूपको अस्मिशब्द करता है, अर्थात् युष्मत्शब्दका अर्थ तुम और अस्मत् शब्दका हम है, और अस्मि ये क्रिया है, हूं इस अर्थमें तो युष्मत् और अस्मत्के मध्यमें अस्मत्को अस्मि ये क्रिया विषय करती है, जैसे अस्मत्का अहं बनता है, और श्रुतिमें लिखा है कि, "अहं ब्रह्मास्मि" तो मैं ब्रह्म हूं यहां श्रुतिने अस्मत्प्रत्ययका गोचर जो अहं है,उसको (अस्मि हूं) ये विषय करता है ।

अस्मदि अप्रयुज्यमानेप्यस्मिप्रत्ययो भवति, अस्मिशब्दोहंप्रत्ययःकोहमितिविचारो अहंशब्द आत्मवाचको भवति ॥

अस्मत्के प्रयोग विना भी अस्मत्की प्रतीति होती है अस्मि ये शब्द अहंशब्दको विपर्यय करता है मैं कौन हूं ये विचार है और अहंशब्द आत्माका वाचक है ॥

तत्र युष्मत्प्रत्ययगोचरं प्रकृतिवाचकं परस्मैपदमस्मिशब्देन प्रतीयते तत्परामर्शविचारादहं ब्रह्म अपरा प्रकृतिः । अस्मिपदेनापरं प्रकृतिस्वरूपं निरूप्यते ॥

उसमें युष्मत्प्रत्ययका विषय प्रकृतिका वाचक परस्मैपद अस्मिशब्दसे प्रतीत होता है उसके सूक्ष्मतत्त्वके विचारसे मैं

ब्रह्म हूं और अन्य माया है अस्मिपदसे मायाका स्वरूप निरूपण करते हैं ।

तयोः परापरयोः परस्परविरोधो ब्रह्मचैतन्यं प्रपञ्च स्तु जडो जडचैतन्ययोरैक्यं न सम्भवति । ब्रह्म चैतन्याभिमानीत्यभिमानी प्रकाशाभिमानी ॥

उन दोनों परब्रह्म और अपर मायामें परस्पर वि और ब्रह्म चैतन्य है और प्रपञ्च जड है तो चैतन्य और ज एकता नहीं हो सकती, और ब्रह्म चैतन्यका अभिमा यह प्रकाशका अभिमानी है ।

"षड्विंशको महाविष्णुर्महागुह्यो महाहविः" इति श्रुतेः ॥ षड्विंशकोयं कथं पञ्चकर्मेन्द्रियाणि पञ्च महाभूतानि पञ्च तन्मात्राणि विषयाश्चान्तःकरण चतुष्टयमभिमानसंज्ञकं सत्त्वरजस्तम इति गुणत्रय रूपम् ॥

पूर्वके अर्थमें श्रुति कहते हैं, कि" वह ब्रह्म षड्विंश महाविष्णु है, महा गुप्त है, और महान् हवि है" षड्विंशक हैं? पांच कर्मेन्द्रिय, पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश ये महाभूतपञ्चतन्मात्रा और विषय और मन, बुद्धि, चित्त, अहं इनका समुदाय अन्तःकरण ये अभिमानसंज्ञक और सत्त्व तम इन तीनों गुणोंके रूप यह षड्विंशक (छब्बीसका समुदाय

तत्र मूलप्रकृतिः समस्तस्वरूपमिति सर्वेषां भव ति तत्र मूलप्रकृतिर्ब्रह्मविषया नित्यचैतन्यस्वरू

माया, परस्परं संश्लिष्टम्भवति "कूटस्थस्सर्वसंश्लिष्टो वाङ्मनोगोचरातिगः" इति श्रुतेः ॥

उसमें मूलप्रकृति समस्त जगत् प्रपञ्चरूप होती है, और ब्रह्मको विषय करनेवाली मूलप्रकृति माया नित्य चैतन्य स्वरूपके साथ परस्पर संबंधको प्राप्त होती है उसमें श्रुति प्रमाण है "परमात्मा कूटस्थ अर्थात् घनके समान है और सर्वके साथ संबंधवाला है, और मन वाणी करके अगम्य है ॥"

तत्र दृष्टान्तमाह ॥ यथा पयसि घृतमिव, काष्ठेऽग्निरिव,यथा तिलेषु तैलमिव,यथा पृथिव्यां गन्ध इव, यथा जलेषु रस इव, यथा वायौ स्पर्श इव, यथाकाशे शब्द इव ॥

उसमें अनेक दृष्टान्तोंसे दृढ़ करते हैं जैसे दूधमें घृत है लकड़ियोंमें अग्नि है तिलोंमें तेल है और जैसे धरतीमें गंध है जलमें रस, वायुमें स्पर्श और आकाशमें शब्द है ॥

अमुना प्रकारेण प्रकृतिपुरुषयोरन्योन्यानादिसंवन्धो भवति ॥ तदेतद्युक्तं ब्रह्म अक्रियमसङ्गं निर्लेपमोक्षस्वरूपमित्युक्तम् अवन्धस्वरूपं प्रकाशस्वरूपं स्वतश्चैतन्यम् ॥

इसप्रकारसे प्रकृति पुरुष माया और ब्रह्मका परस्पर अनादिसंबंध है ये सत्य है जो ब्रह्मको क्रियारहित संगहित निर्लेप मोक्षस्वरूप कहा है और बंधनरहित स्वयं प्रकाशरूप और स्वचेतन कहा है ॥

माया तु जडस्वरूपाऽचैतन्यस्वरूपा । यथा ।
मृत्पिण्डस्य स्वक्रिया न संभवति, तथा मायाया
अचैतन्येन आत्मक्रिया न संभवति। आदिकारि-
त्वाच्चेति पूर्वोक्ता शंका परिहृता ॥

और माया तो जडस्वरूप अचेतनस्वरूप है जैसे मृत्तिक
स्वतः क्रिया नहीं होती वैसेही मायाको अचेतन होनेसे आ
क्रिया उसमें नहीं संभवती मायाको आदिकारी (अ
सान्त होनेसे) इतने कथनसे पूर्वोक्तकी आशङ्का निवृत्त हुई

अस्मिशब्देनान्तर्व्यावर्तिशोधने हेतुभूतं साक्षात्का-
रोपरोक्षज्ञानसाधनमुच्यते ॥

अस्मिशब्दसे अभ्यन्तरके संशोधनका कारण साक्षात्
अपरोक्ष (प्रत्यक्ष) ज्ञानका कारण कहा है ॥

तत्र पुरुषसंयोगेन प्रकृतिश्चैतन्यात्मतया कर्त्री
भवति। ततः प्रकृतिः क्रिया संभवति वैकारिकी
संभवति।

उसमें पुरुषके संयोगसे प्रकृति चैतन्यात्मक होकर क
और फिर चेष्टा और विकारवाली होती है ॥

तत्र दृष्टान्तमाह । किमिव, सूर्यमग्निरिव। तत्र
सूर्यस्थाने ब्रह्म अग्निस्थाने मूलप्रकृतिः अग्नि-
स्थाने कार्यं समस्तं किमिवाग्निपात्रमिव चुम्ब-
कलोहमिव ॥

उसमें दृष्टान्त कहते हैं, जैसे सूर्य और अग्नि उसमें सूर्यके स्थानापन्न ब्रह्म और अग्निके स्थानापन्न अनादि माया है और अग्निके स्थानमें समस्त जगत्रूप कार्य है, जैसे अग्नि और पात्र और चुम्बक और लोहा है ।

अन्धपङ्गुन्यायेन प्रकृतिपुरुषसंयोगेन क्रियोत्पत्तिर्भवति ॥ एकज्ञाने वहुधा ज्ञानमूलमस्ति तदा नाना चेष्टा भवति ॥

अंधपङ्गुन्याय अर्थात् अंधेके आँख नहीं हैं, और पंगु पादरहित है ये पुरुष दोनों मिलकर जैसे कोई कार्य करें उसको अंधपंगुन्याय कहते हैं उसीतरह प्रकृति और पुरुषके संयोगसे क्रियाकी उत्पत्ति होती है, एकही ज्ञान अनेक ज्ञानोंका कारण है, तभी नानाप्रकारकी चेष्टा होती है॥

बन्धमोक्षस्वर्गनरकपापपुण्यमूर्खत्वपाण्डित्यविकारेण ब्रह्मादिपिपीलिकापर्यन्तं ज्ञानिस्वभावं पृथक्॥२॥

बंधन मोक्ष स्वर्ग नरक पाप और पुण्य मूर्खता और विद्या आदि विकार करके ब्रह्मासे लेकर चींटीतक ज्ञानीका स्वभाव पृथक् पृथक् है ॥

परमात्मा एक एव तस्य शोधने हेतुः क्षीरनीरमैक्यं कृत्वा तत्साधनकारणं परमहंसमार्गो निरूप्यते ॥ तत्र एकं पारमार्थिकं ज्ञानमेकं व्यावहारिकं तस्य शोधने हेतुः अस्मिशब्दवाक्यं प्रमाणं वर्त्तते ॥

परमेश्वर एकही है उसके संशोधनका हेतु दूध और मिलाके उसके पृथक् करनेके साधनका कारण पर मार्गका निरूपण करते हैं, उसमें एक पारमार्थिक और दूसरा व्यावहारिक उसके शोधनमें कारण शब्दका वाक्य प्रमाण है ॥

पूर्वमुक्तं पञ्चविंशतितत्त्वानां ब्रह्मस्वरूपतानिराक णपूर्वं षड्विंशं ब्रह्म प्रतिपाद्यते ॥

पहिले चौवीस तत्त्वोंको कहचुके हैं, अब ब्रह्मके स्व निराकरणपूर्वक छब्बीस तत्त्वात्मक ब्रह्म है, सो कहते हैं

तत्रादौ कर्म्मेन्द्रियवृत्तिशोधनं क्रियते॥ कर्मेन्द्रिय ब्रह्म न संभवति कर्मेन्द्रियवृत्तिभेदात्। कथं वृत्ति भेदो वाचा वक्तव्यंक्रिया भवति । हस्ताभ्यां पानादिक्रिया भवति। पादाभ्यां गमनक्रिया भवति। पायोर्मलोत्सर्गक्रिया भवति ॥ उपस्था न्मूत्रोत्सर्गः स्त्रीपुंसोरानन्दक्रिया च भवति ॥

उसमें पहिले कर्मेन्द्रियोंकी वृत्ति शोधन करते हैं कर्मे ब्रह्म नहीं होसकती क्योंकि कर्मेन्द्रियोंकी वृत्तिका भेद है वृत्तिभेद कैसे है सो दिखलाते हैं कि, वाणीसे जाता है और हाथोंसे पान आदि कर्म किया जाता पाउँसे गमन, गुदासे मलका त्याग और लिंगसे मूत्रका और संभोग किया जाता है ॥

एवंक्रियं कर्म्मेन्द्रियं ब्रह्म न संभवति, तर्हि एवमिन्द्रियं ब्रह्म संभवति चेन्न तत् ॥

इसप्रकार कर्मेन्द्रियोंको पृथक् पृथक् कर्म करनेवाली होनेके कारण कर्मेन्द्रिय ब्रह्म नहीं होसकती, इसीतरह इन्द्रियमात्र ब्रह्म नहीं होसकती ॥

ज्ञानेन्द्रियस्य वृत्तिभेदात् । श्रोत्रेण शब्दग्रहणङ्करोति । चक्षुषा रूपग्रहणं करोति । जिह्वया रसग्रहणं करोति। त्वचा स्पर्शग्रहणङ्करोति । एवं ज्ञानेन्द्रियमेकमेकं विषयग्रहणं करोति। अल्पज्ञत्वाज्जडत्वाच्च ॥

अथ ज्ञान इन्द्रियोंकी वृत्तिके भेद दिखलाते हैं, ज्ञानेन्द्रियोंके वृत्तिके भेदसे कानसे शब्दका ग्रहण, चक्षुसे रूपका, जिह्वासे रसका, चर्म से स्पर्शका ग्रहण किया जाता है इसी प्रकार ज्ञानेन्द्रिय भी एकही एक विषयका ग्रहण करती है, क्योंकि, अल्पज्ञ और जड है--

यच्छब्दग्रहणङ्करोति न तत्स्पर्शग्रहणं करोति, यत्स्पर्शग्रहणङ्करोति न तद्रूपग्रहणं करोति, यद्रूपग्रहणङ्करोति न तद्रसग्रहणङ्करोति । यद्रसग्रहणङ्करोति । न तद्गंधग्रहणं करोति । एकैकस्य ज्ञानेन्द्रियस्यानेकतत्त्वाज्ञानान्नानेकत्वम् ॥

जो इन्द्रिय शब्द ग्रहण करती है, वो स्पर्शग्रहण नहीं करती और जो इन्द्रिय स्पर्शग्रहण करती है वो रूपका

ग्रहण नहीं करती और जो रूपका ग्रहण करती है, वो ग्रहण नहीं करती, इसी तरह जो रसका ग्रहण करती गंधका ग्रहण नहीं करती, ज्ञानेन्द्रियोंको अनेक तत्त्वके उत्पन्न न होनेसे अनेकत्व नहीं है, अर्थात् एक एक विष एकही एक इन्द्रिय ग्रहण कर सकती है।

ब्रह्म तु "सर्वज्ञं सर्वेश्वरं सर्वनित्यं सर्वेन्द्रियगुणद्रष्टृ सर्वप्रत्ययसाक्षी" इति श्रुतेः। तस्माज्ज्ञानेन्द्रियस्य ब्रह्मत्वं न संभवति ॥

और ब्रह्म तो सर्वज्ञ है, सर्व प्राणी पदार्थका स्वामी सर्व पदार्थमें नित्य है समस्त इन्द्रिय और गुणोंका द्रष्टा और प्रत्येक पदार्थकी सत्ताका साक्षी है, यह उपरोक्त श्रुति है, अर्थ प्रमाण है, इसवास्ते ज्ञानेन्द्रियोंको ब्रह्मत्व नहीं होसक

तर्हि ब्रह्मणो देहः सम्भवति इति चेन्न देहस्य षड्भावविकारित्वात्तस्य षड्भावा अस्ति जायते वर्द्धतेऽपक्षीयते विपरिणमते विनश्यति ॥

तब ब्रह्मको शरीर होसकता है। इस आशंकाके होते हैं कि, नहीं. क्योंकि, देह छे विकारों करके संयुक्त है ब्रह्म निर्विकार है वे विकार यह हैं कि, गर्भाधान रहतेही हैं, है ॥ १ ॥ फिर उत्पन्न भया ॥ २ ॥ बढता है ॥ ३ लोमश्मश्रुसे विकृतिको प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ युवावस्था होता है ॥ ५ ॥ और नाशको प्राप्त होता है ॥ ६ ॥ छे-विकारोंकरके युक्त है ॥

एवं "शीतोष्णसुखदुःखमानाऽपमानाः ब्राह्मणादि-कीटपतङ्गमशकपर्यन्ताः समस्तस्थूलसूक्ष्मदेहधर्माः षड्भावविकाराः" इति श्रुतेः ॥

इसीप्रकार "शीत, उष्ण, सुख, दुःख, मान, अपमान, ब्राह्मसे आदिले कीडे, पतङ्ग, मच्छरपर्यन्त समस्त स्थूल सूक्ष्म देहके धर्म छे विकार हैं" यह श्रुति प्रमाण है--

"देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा॥ तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति॥"इति भगवद्वाक्यप्रामाण्यात् ॥

इस देहमें जैसे कुमार और यौवन और जरा (वृद्धावस्था) है, इसीतरह अन्य देहकी प्राप्ति होती है, इसमें विद्वान् मोहको नहीं प्राप्त होता इस भगवान्के वचन प्रमाणसे ॥

अयन्तु शुद्धो बुद्धो नित्यमुक्तोऽखण्डानन्दैकरसः षड्भावविकाररहितस्तथा च भगवद्वाक्यम्—" न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः ॥ अजो नित्यः शाश्वतोयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥" इति ॥

यह आत्मा तो शुद्ध है ज्ञानरूप है सदा मुक्तस्वरूप है, अखण्ड आनन्द एकरस छे विकारोंसे रहित है उसमें भगवान्का वाक्य प्रमाण है कि "यह आत्मा न उत्पन्न होता है न मरता है और न कभी उत्पन्न हुआ न फिर कभी होगा,

यह तो केवल अजन्मा है, नित्य है, सार्वकालिक है, है और शरीरके नाशसे न इसका नाश है ।"

इति सर्वानुस्यूतोऽखण्डदण्डायमानोऽस्ति । य समुद्रे फेनबुद्बुदा उल्लसान्ति तथा सत्तामात्रब ब्रह्मादिकीटपतङ्गसमस्तदेहेषु उदयति देहस्तस्तो स्तं याति ॥

इसप्रकार सर्व प्राणी पदार्थमें परिपूर्ण अखण्ड नांई है, जैसे समुद्रमें फेन बुद्बुदा प्रतीत होते हैं उसी केवल सत्तामात्रसे ब्रह्मासे ले कीट पतंग पर्यंत सम्पूर्ण देहको प्राप्त होता है और लयको प्राप्त होजाता है॥

अत एव स्थूलदेह आत्मा न भवति ॥ अत श्रीमच्छङ्कराचार्यैरुक्तम् । "वपुरिदमत्र मायात पेक्षा कोशनात्मा जडप्रायः । प्रागुत्पत्तेश्च पश्च त्तदभावस्यापि विधानत्वम्" इति ॥

इसलिये स्थूल देह आत्मा नहीं होसकता, अतएव मच्छंकराचार्यजी महाराजने कहा है कि "यह स्थूल आत्मा और मायाकी अपेक्षा कोश जो पूर्व निरूपण आये हैं उसकरके जड़के समान है उत्पत्तिसे पहले और भी इस स्थूल देहका अभावही निर्धारित है" ॥

तर्हि प्राण आत्मा इति चेन्न। प्राणस्तु वायुः क्षुत्पि पासाश्वासोच्छ्वासवृत्तिपञ्चप्रकारः अपानस्त्वधोग तोत्सर्गं करोति समानस्त्वन्नपानादिपचनं करोति

प्राणस्तु कामक्रोधलोभमोहोत्पादको भवति उदानस्तु श्वासोच्छ्वासानामेकविंशतिसहस्राणि षट्शताधिकानि करोति ॥

तब प्राण आत्मा होना चाहिये तो कहते हैं कि, नहीं प्राण तो वायु है क्षुधा (भूख) प्यास, श्वास, उच्छ्वास इस प्रकारसे पञ्च प्रकार है उनसे अपान वायु नीचेकी वायु मलका त्याग करता है और समान वायु अन्नपानको पचाता है और प्राण-वायु काम, क्रोध, लोभ, मोहको उत्पन्न करता है और उदानवायु श्वासका आना जाना इक्कीस हजार छः सोवार करता है ॥

व्यानस्तु धावनोत्पतनप्रसरणादिसमस्तेन्द्रियवृत्तिं करोति ॥

और व्यान वायु भागना, गिरना, फैलाना, समस्त इन्द्रियोंको कार्यमें प्रवृत्त करता है ॥

आत्मा त्वचलोऽखण्डोऽक्रियोऽजो नित्यः शाश्वतः समस्तः प्राणादिवायुवृत्त्युत्पादकः श्वासोच्छ्वास-रहितस्तत्प्रवर्तक एव। तथा चोक्तं श्रीमच्छङ्कराचार्यैः—

और आत्मा तो अचल है अखण्ड है और क्रियारहित जन्मरहित नित्य एकरस है और प्राणआदि वायुकी वृत्तिका उत्पन्न करता है और श्वास उच्छ्वाससे रहित और उसका प्रवर्त्तक है सो श्रीशंकराचार्यजी महाराजने कहा है ॥

"कोशः प्राणमयो वायुविशेषो वपुषावच्छिन्नः अस्य कथमात्मता स्यात्क्षुत्तृष्णाभ्यामुपेयु पीडाम्" इति । तस्मात्प्राण आत्मा न संभवति

प्राणमय कोश एक वायुविशेष है और शरीरमें करताहै ,इसको आत्मता कैसे होसकती है क्योंकि और तृषा करके पीडित होताहै और आत्मा नहीं हो सलिये प्राणमय कोश आत्मा नहीं होसकता ॥

तर्हि मन आत्मा संभवति इति चेन्न "मनो ब्रह्मे व्यजानात्" इति श्रुतेः मनस्तु सङ्कल्पविकल्पा त्मकमिदं करिष्यामि वक्ष्याम्यहम् अ ब्राह्मणोऽयं क्षत्रियोऽयमयं वैश्योऽयं शूद्र इ नाना विकल्पसङ्कल्पत्वात् स्वर्गनरकबंध मोक्षकल्पनाजालजटिलं मनोऽनेकरूपाणि क ल्पयति ॥

तब मन आत्मा होना चाहिये तो कहते नहीं क्योंकि को ब्रह्म श्रुतिके अर्थको विपरीत निश्चय करनेवाले जा मन तो सङ्कल्प विकल्पका कर्ता है यह करूँगा यह यह ब्राह्मण है यह क्षत्रिय है और वैश्य है शूद्र है दि (नाना) अनेक सङ्कल्प विकल्पोंके करनेवाले स्वर्ग बंध मोक्षकी कल्पनाके जालोंको मन करता है ॥

मनः समस्तेंद्रियक्षोभकारकं कामाद्युत्पादकम जितेन्द्रियतानिमित्तं तपःक्षयकारकमत्यन्त

चपलरूपं पद्मपत्रं जलं प्राप्य यथा वायुं स्पृष्ट्वाऽश्वत्थपत्रं चपलं तथा हृदयकमलमध्येऽत्यन्तचपलन्तिष्ठति "चन्द्रमा मनसो जात" इति श्रुतेः ॥

मन सकल इन्द्रियोंके क्षोभका कारक है और काम क्रोध आदिका उत्पादक है विषयलंपटताका निमित्त तपके नाशका कारण अत्यन्त चपल है, जैसे कमलके पत्रमें जल चंचल रहताहै और वायुके लगनेसे पीपलके पत्र जैसे चंचल होतेहैं, वैसेही हृदयकमलमें मनभी अत्यन्त चंचलतासे रहता है, और श्रुतिमें लिखाहै कि-"चन्द्रमा मनसे उत्पन्नहुआ" अर्थात् चन्द्र जैसे परिणामी और चंचल है उसीतरह चन्द्रका कारण मनभी चञ्चल है जैसा कारण होता है वैसाही कार्य देखनेमें आताहै—

आत्मा त्वचलोऽक्षोभरूपः सर्वव्यापकः सर्वक्रियारहितः सर्वदेशकालवस्तुपरिपूर्णश्चैतन्यमात्र आत्मा नित्यमुक्तो मनस्तु नित्यबन्धस्तथा चोक्तं श्रीमच्छङ्कराचार्यैः ॥ "यत्संकल्पविकल्पैरणुपरिमाणं यदनिन्द्रियंतुविभु। अथ कथमात्मता स्याद्विकारशीलस्य वृत्तिभेदं वा" इति। तस्मान्मन आत्मा न भवति ॥

और आत्मा अचल अक्षोभरूप स्वर्वव्यापी सर्व क्रिया रहित समस्त देश काल वस्तुमें परिपूर्ण चैतन्यमात्र है, और

आत्मा नित्यमुक्त है, और मनको नित्यबंध है सो
राचार्य महाराजने कहाहै कि, "जो संकल्पकरके
है, और अणुपरिमाणके समान और इन्द्रियों करके
व्यापक है, उसको आत्मत्व कैसे होसकता है क्योंकि
विकारशील है, और आत्मा निर्विकार है इसप्रकार
कहते हैं, इसलिये मन आत्मा नहीं होसकता ।

तर्हि बुद्धिरात्मा भवतीति चेन्न बुद्धिस्तु जीवक
देवदत्तं विज्ञानंभवति "विज्ञानमानन्दं ब्रह्म" इ
श्रुतेस्तच्च विज्ञानं देशतः परिच्छिन्नं काल
परिच्छिन्नं यद्दृश्यन्तत्परिकल्पयति यच्छ्रु
तत्कल्पयति अदृश्यमश्रुतं ज्ञानं न ।

तब बुद्धि आत्मा होना चाहिये तो कहते हैं कि,
बुद्धि तो जीवका विज्ञानरूप है, श्रुतिमेंभी लिखा है, का
"विज्ञानमानन्दं ब्रह्म" विज्ञानरूप आनन्दरूप ब्रह्म
विज्ञान देश करके भेदको प्राप्त नहीं होता और न काल
भेदको प्राप्त होताहै, दृश्य (जगत्) को कल्पित
जो श्रुत ज्ञान है, उसकी कल्पना करताहै, विना देखे
सुनेकी कल्पना नहीं करता.

अतिबुद्धिस्तु त्रिगुणात्मिका भवति । सात्त्विकी
बुद्धिर्देवतोपासनङ्करोति। धर्मार्थकाममोक्षचतुर्वि
पुरुषार्थसिद्धिनिमित्तार्थं सात्त्विकी बुद्धिः प्रवर्त्तते

अतिबुद्धि सत्व रज तम त्रिगुणात्मिक है, उसमें सत्त्व-गुण प्रधानकी बुद्धि देव उपासना करतीहै, और धर्म्म, अर्थ, काम, मोक्ष, ये चार पुरुषार्थके सिद्धिके निमित्त प्रवृत्त होती है.

तत्र राजसी बुद्धिर्विषयभेदान्निवर्त्तते पुष्पचन्दन-वनितादिविषयान्करोति । विषयाश्च शब्दस्पर्श-रूपरसगन्धादयः ॥

और उसमें राजसीबुद्धि विषयके भेदोंसे निवृत्त होकर पुष्प, चन्दन,स्त्री,माला आदि विषयोंमें प्रवृत्त करती है,शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध ये पांच विषय बडे प्रबल हैं॥

सविलासबुद्धिर्नानाभेदबुद्धिः शुक्लकृष्णलोहिता-दिकनानाभावान्कल्पयति इति राजसी बुद्धिः ॥

उस राजसी बुद्धिका एक भेद सविलास अर्थात् आनन्द-कारिणी बुद्धि श्वेत, श्याम, लाल आदिक नानाप्रकारकी कल्पना करती है, ये राजसी बुद्धिका निरूपण हुआ । अब—

तामसीबुद्धिस्तु निद्रालस्यमैथुनादिकधर्मे प्रवर्त्तते कामक्रोधलोभमोहहर्षशोकविषादे प्रवर्त्तमाना परस्परवैरबुद्धिरत्यन्तमूढा विवेकशून्या तामसी॥

तामसी बुद्धि उसको कहते हैं कि, जो नींद, आलस स्त्री-संभोग आदिक धर्मोंमें प्रवृत्त होती है, काम, क्रोध, लोभ, मोह, हर्ष, शोक, विषाद (क्लेश) में प्रवृत्त हो, परस्पर वैरका कारण अत्यन्त मूढ़ विचारशून्य तामसी बुद्धि होती है.

तस्मादात्मा स्वतश्चैतन्यप्रकाशरूपः ज्ञानानन्द मयः समस्तप्रपञ्चक्रियारहितस्तुर्य्यावस्थामात्रं भवतिष्ठते देशकालवस्तुतोऽपरिच्छिन्नः समस्त प्रपञ्चज्ञानोत्पादकस्वरूपः समस्तविषयप्रकाश कारणं स परमात्मा "इन्द्रियाणि पराण्याहुरि न्द्रियेभ्यः परम्मनः॥मनसस्तु परा बुद्धिर्यो बुद्धे परतस्तु सः"इति भगवद्वचनं प्रमाणम् । तस्मा त्मा बुद्धिर्न भवति ॥

इसलिये आत्मा स्वतः चैतन्य प्रकाशरूप है, और रूप आनन्दमय है, सकल जगत् प्रपंचसे रहित क्रिया तुर्य अवस्थामात्रमें स्थित देश काल वस्तुके भेदसे भेद प्राप्त होनेवाला है, और समस्तप्रपंचके ज्ञानको उत्पन्न क वाला और समस्त विषयोंके प्रकाशका कारण परमात्मा श्रीभगवान् श्रीकृष्णचन्द्र परमात्माने भी कहा है कि,इन्द्रि को पर कहा है और इन्द्रियोंसे परे मन है और मनसे बुद्धि और जो बुद्धिसे परे है, सो आत्मा है, इस बुद्धि आत्मा नहीं होसकती ॥

तर्हि अहङ्कार आत्माभवतु । अहङ्कारस्तु अहंता ममता भवति । अहं त्वं तव मम बहुधा नानाजी वयोनिशरीरलक्षणानि॥ तज्ज्ञानस्वभावाभिमानो बहुधोल्लसति ॥

तब अहंकार आत्मा होना चाहिये तो कहते हैं कि, अहंकार तो अहंता, ममता है, मैं मेरा तूं तेरा अनेक नाना प्रकारके जीव योनि शरीर और ज्ञानस्वभाव अभिमानकी कल्पना करता है.

अहं सुखी अहं दुःखी अहं कृशोऽहं स्थूलोऽहं मूकोऽहं पण्डितोऽहं मूर्खोऽहं राजाहं भृत्योऽहं श्रोत्रियोऽहं ब्राह्मणोऽहं क्षत्रियोऽहं वैश्योऽहं शूद्रोऽहमीश्वरोऽहं दरिद्र इत्यादि, विकल्पसङ्कल्पसहस्रवर्त्ति मम पुत्रो मम धनं मम क्षेत्रमित्यादि युष्मत्प्रत्ययेन नानाप्रकारब्रह्मादिकीटपतङ्गपर्यन्तं नानाभेदकल्पनाङ्करोति ॥

मैं सुखी हूं, मैं दुःखी हूं, मैं दुबला हूं, मैं मोटा हूं, मैं बहिरा, मैं पण्डित हूं, मैं मूर्ख हूं, मैं राजा, मैं नोकर, मैं श्रोत्रिय, मैं ब्राह्मण, मैं क्षत्रिय, मैं वैश्य और मैं शूद्र हूं, मैं स्वामी हूं और दरिद्र हूं इत्यादि विकल्प सङ्कल्प हजारोंको करनेवाला मेरा पुत्र, मेरा धन, मेरा खेत इत्यादि अपना कह नानाप्रकार ब्रह्मासे लेकर कीटपर्यन्त अनेक कल्पना करता है.

तस्मादात्मा स्वजातिभेदरहितः स्वगतपरगतभेदरहितः "एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म नेह नानास्ति किंचन" इति श्रुतिवाक्यं प्रमाणम् । आत्मा ब्रह्मादिकीटपर्यन्तं जगत्समग्रप्राणिमात्रस्यान्तर्यामित्वेन तिष्ठति तस्मादहङ्कार आत्मा न भवति ॥

इसकारण आत्मा स्वजातिभेद ब्राह्मणमें उपाध्याय रीका भेद और स्वगतभेद अर्थात् एकही वृक्षमें पत्र पुष्पका है और परगतभेद जैसे पाषाण जलका भेद इन प्रकारके भेदसे रहित है उसमें श्रुतिभी प्रमाण है "एकं द्वितीयं ब्रह्म नेह नानास्ति किंचन" ब्रह्म एक है और तीय करके रहित है इस संसारमें केवल ब्रह्मके अति अनेक पदार्थ कुछ नहीं है अर्थात् जो कुछ है ब्रह्म आत्मा ब्रह्मासे ले कीट पर्यन्त सर्व प्राणि पदार्थमें यामीरूपसे स्थित है अतएव अहङ्कार एकदेशीपदार्थ त्मा नहीं होसकता ॥

तर्हि चित्तमात्मा भवति इति चेत् चित्तन्तु चैत न्यज्ञानन्न भवति कदाचिदुदयं याति कदाचि दस्तं याति यज्जाग्रदवस्थायां ज्ञानं तत्स्वप्नाव स्थायान्न भवति यत्स्वप्नावस्थायां ज्ञानं तत्सुषु प्त्यवस्थायां न भवति अन्योन्यज्ञानवैलक्षण्य अवस्थाभेदेन तस्माच्चित्तज्ञानं विरुद्धम् ॥

तब चित्त आत्मा होना चाहिये, तो कहते हैं कि त्तको चैतन्यज्ञान नहीं है, कभी चित्तमें ज्ञान उत्पन्न है, और कभी लय होजाता है जो जाग्रत् अवस्थामें है, सो स्वप्नावस्थामें नहीं है और जो स्वप्न अवस्थामें ज्ञा सो सुषुप्ति अवस्थामें नहीं है परस्पर ज्ञान विलक्षण है

स्थाके भेदसे ज्ञानका भेद है इसलिये चित्तका ज्ञान विरुद्ध ज्ञान है.

अत एव देशकालवस्तुपरिच्छिन्नं ज्ञानमेकरसस्वरूपं तस्मादात्माऽखण्डज्ञानावस्थात्रयसाक्षी कालत्रयसाक्षीलिङ्गत्रयसाक्षित्वेनावतिष्ठतेअत एव सर्वज्ञत्वमीश्वरत्वं सर्वनियन्तृत्वं सर्वकर्त्तृत्वम् "स ईश्वरः कूटस्थः सर्वसंश्लिष्टोवाङ्मनोगोचरातिगः" इति श्रुतेस्तस्माच्चित्तमात्मा न भवति ॥

अतएव देश, काल, वस्तुओंकरके भेदको न प्राप्त होनेवाला एक रस ज्ञान जो है सोही आत्मा है और जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति इन तीनों अवस्थाओंका साक्षी भूत, भविष्यत, और वर्त्तमान तीनों कालका साक्षी और लिङ्गत्रयका साक्षी होकर अवस्थित है इसीवास्ते उस आत्माको सर्वज्ञत्व सर्वनियन्तृत्व और सर्वकर्त्तृत्व कहा है तहां श्रुति भी प्रमाण है कि, "सईश्वरः कूटस्थः सर्वसंश्लिष्टोवाङ्मनोगोचरातिगः" इति वह ईश्वर कूटस्थ है सर्वप्राणी पदार्थमें व्याप्त है और मन वाणीका अविषय है. इसलिये चित्त आत्मा नहीं होसकता.

तर्हि मूलप्रकृतिरात्मा भवतीति चेन्न मूलप्रकृतिस्तु अनादिसिद्धा भवति। कस्मात्सूक्ष्मत्वादचलत्वादखण्डत्वात्सर्वव्यापकत्वान्निर्लेपत्वात्सत्तायामनेकब्रह्माण्डमुल्लसति ॥

तो मूल प्रकृति आत्मा होना चाहिये तो कहते वैस नहीं मूलप्रकृति तो अनादिसिद्ध है क्योंकि सूक्ष्म गच अचल अखण्ड और सर्वमें व्यापक और निर्लेप हो उसकी सत्तामें अनेक ब्रह्माण्ड उत्पन्न होते हैं—

सामाया चतुर्विंशतितत्त्वानाङ्कारणस्वरूपं स्वस्व पेण विकारी गुणत्रयकारणं समस्तविषयगोच समस्तकार्यभिन्नत्वेन तिष्ठति ॥

वो माया चौवीस तत्वोंका कारणरूप है और स्वरूपसे सत्व, रज,तम ये विकारयुक्त तीनों गुणोंका है और समस्त विषयोंके प्रकाश करनेवाली है और कार्य्योंसे पृथक् प्रतीत होती है.

तस्मान्माया यद्यपि शुद्धा भवति तथापि दोषत्रया रोपणं क्रियते॥कार्येण कारणानुमानम्भवति यस् कार्यञ्जडं तस्य कारणस्य जडत्वं भवति यथ बीजं कटुकं तथा फलम्भवति यथेक्षुस्तथ शर्करा स्वादुर्भवति ॥

इसी कारण माया यद्यपि शुद्ध है, तथापि दोष उसमें आरोप करते हैं क्योंकि; यह नियम है कि, कारणका अनुमान होता है घट देखतेही,उसके कारण काका ज्ञान होता है इसी प्रकार जिसका कार्य ज तो उसका कारण जड़ होगा जैसा कडुआ बीज हो

वैसाही उसका फल भी अवश्य कडुआ होता है और जैसा गन्ना मीठा होता है तो उसका कार्य सक्कर भी अवश्य मीठी होती है.

अतएव प्रकृतिकार्यं पृथ्व्यप्तेजोवाय्वाकाशमिन्द्रियान्तःकरणचतुष्टयंगुणत्रयम् । सर्वेषामेषांजडत्वं दृश्यते यस्य कार्यं जडं तस्य कारणस्यापि जडत्वं यस्य कारणं जडं तस्य कार्यस्यापि जडत्वं भवति प्रसङ्गादन्यथार्थो विरुद्धः प्रथमो दोषो जडत्वं द्वितीयो दोषो विकारित्वं तृतीयो दोषो गुणत्वमिति गुणदोषत्रयाणामारोपणं क्रियते ॥

अत एव मायाके कार्य पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश और इन्द्रियां और मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, सत्व, रज, तम ये गुण सर्व जड प्रतीत होते हैं जिसका कार्य जड होता है उसका कारणभी जड़ होता है और जिसका कारण जड होता है उसका कार्य भी जड होता है यह साधारण नियम है विना प्रसंगके अन्य अर्थ विरुद्ध माना जाता है—इस—लिये प्रकृत प्रासका निरूपण करते हैं प्रथम दोष जडत्व है और द्वितीय दोष विकारित्व है और तीसरा दोष गुणत्व है ये गुण दोष और जडत्व इनका आरोप करते हैं ।

सत्वं रजस्तम इति गुणाः "दैवी ह्येषा गुणमयी मम

माया दुरत्यया।" इति भगवद्वाक्यप्रामाण्यात्त स्मान्माया गुणमयीति सिद्धान्तः ॥

सत्व रज तम ये गुण हैं और श्रीकृष्णचन्द्र परमात्मा कहा है कि, ये मेरी गुणमयी दैवी माया वडी दुस्तर है इस माया सत्व रज और तम इन गुणों करके संयुक्त है सिद्धान्त है इसलिये—

"ब्रह्मणस्त्वप्रकृतित्वन्तिष्ठति" इति श्रुतेः स आत्माऽविकारी स्थूलादिगुणरहितं सच्चिदानन्द स्वरूपम् "आदित्यवर्णन्तमसःपरस्तात्" इति श्रुतेः अत एव परमात्मा साक्षात्कारसमस्तप्रपञ्चपरोक्ष स्वरूपः स्वयमपरोक्षो यथाऽऽदित्यः स्वप्रकाशङ्क रोति तथा ब्रह्म प्रकाशमेव सर्वेषु तिष्ठति ब्रह्म स्व तश्चैतन्यं लक्षणवृत्तिसाधनङ्कारणमित्यस्मिञ्श ब्दनिर्णयः ॥

ब्रह्मको मायारहित श्रुतिनेंभी प्रतिपादन कियाहै "अप्रकृतित्वंतिष्ठति" ब्रह्म मायारहित है, वह आत्मा विका रहित है और स्थूल सूक्ष्म आदि गुणोंकरके रहित है सत् चित् आनन्द स्वरूप है "आदित्यवर्णं तमसः परस्ता श्रुति कहती है कि, परमात्मा सूर्यके समान प्रकाशस्व और अन्धकारसे परे हैं इसीवास्ते परमात्मा समस्त प्रपं परोक्ष अर्थात् इन्द्रियोंकरके अदृष्टस्वरूप है और आप

प्रकाशक है जैसे आदित्य स्वतः प्रकाश करता है वैसे ब्रह्म भी स्वयंप्रकाश और समस्त जगतको प्रकाशित कर रहा है ब्रह्म स्वतःप्रकाश और चैतन्य-स्वरूप है इस लक्षणावृत्ति करके प्रत्येक पदार्थका साधनभूत है ये अस्मिशब्दका निर्णय करा-

यस्मात्पञ्च कर्मेन्द्रियाणि पञ्चमहाभूतानि पञ्च तन्मात्रा अन्तःकरणचतुष्टयं गुणत्रयं मूलप्रकृति-रित्यादि समस्तप्रपञ्चकार्यं कारणात्मकश्चासद्रूपं च करणं सद्रूपञ्च कार्यं तस्मादात्मा सदसत्परं विजानीयात्। "सदसत्परम्" इति श्रुतेः-

जिस आत्मासे पांच कर्मेन्द्रिय और पंचमहाभूत और पञ्चतन्मात्रा अर्थात् शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध और अन्तः-करण और तीनों गुण और मूलप्रकृति (माया) आदि समस्त जगत् प्रपञ्चका कार्य और कारण असद्रूप कारण (कार्यका साधन) और सत्रूप कार्य सर्वका कर्त्ता है इस लिये आत्मा असद्रूप और सद्रूपसे पर है सो श्रुतिमें भी लिखा है कि, "सदसत्परम्" इति श्रुतेः ॥ परमात्मा सत् और असत् इससे परे है.

तस्माज्जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्याद्यवस्थात्रयसाक्षित्वेन तिष्ठति कस्मात्स्वप्रकाशत्वात्स्वतश्चैतन्यत्वात्स-त्त्वादिगुणरहितत्वात् स यस्मात्सर्वप्रपञ्चान्वयव्य-

तिरेकेण तिष्ठति तस्मात् "सर्वेन्द्रियगुणद्रष्टृस
प्रत्ययलक्षणम्" इति श्रुतेः ॥

इसी कारण जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति आदि तीनों अ
ओंका साक्षीरूपसे स्थित है क्योंकि, स्वप्रकाश स्वतः
सत्त्व, रज, तमगुणोंसे रहित होनेके कारण जिस हेतु
प्रपंचमें व्याप्त होकर स्थित है इसी कारण " सर्वेन्
णद्रष्टृ सर्वप्रत्ययलक्षणम्" इति श्रुतेः ॥ समस्त इन्द्रियाँ
गुणोंका द्रष्टा और प्रत्येक प्राणी पदार्थका साक्षी है
श्रुति प्रमाण है.

तस्माद्ब्रह्म सत्तामात्रेणावतिष्ठते समस्तविषयगो
चरं तस्मात् "आत्मा ज्ञानगम्यः पुरातनः" इति श्रु

इसीकारण ब्रह्म अपनी सत्तामात्रसे अवस्थित है
यावत् विषयोंका प्रकाशक है अत एंव श्रुतिमें लिखा है
"आत्मा ज्ञानगम्यः पुरातनः" आत्मा ज्ञानसे जाननेके
है और प्राचीन है.

तस्मात्स्थूलसूक्ष्मकारणशरीर आत्मा न भवति
स्थूलदेहो विश्वाभिमानी ब्रह्मा देवता स्थूलभोगो
जाग्रदवस्था वैखरी वाणी वैराटशरीरं पंचभूता
त्मकं पंचमहाभूतलक्षणम् ॥

इसीवास्ते स्थूल सूक्ष्म कारण शरीर आत्मा नहीं होता
स्थूलदेहका अभिमानी विश्व है देवता ब्रह्मा है भोग

है अवस्था जाग्रत् है और वाणी वैखरी है वैराट शरीर है पञ्चभूतका बनाहुआ अर्थात् पञ्चमहाभूतोंका किया हुआ है।

पृथ्व्यापस्तेजोवायुराकाश इति पंच महाभूतानि वाक्पाणिपादपायूपस्थानिपञ्चकर्मेन्द्रियाणि श्रोत्रं त्वक्चक्षुर्जिव्हा घ्राणमिति पञ्च ज्ञानेन्द्रियाणि शब्दस्पर्शरूपरसगन्धा इति पञ्च विषयाः पञ्चतन्मात्राणि अन्तःकरणचतुष्टयंमनो बुद्धिश्चित्तमहंकार इति गुणत्रयं सत्वंरजस्तम इति ॥

प्रसंगसे पञ्चमहाभूत तथा अन्यान्य पदार्थोंका परिगणन करते हैं पञ्च महाभूत पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश ये हैं और वाणी, हस्त, पाद, गुदा, उपस्थ ये पांच कर्मेन्द्रिय हैं और कर्ण, चर्म, नेत्र, रसना और नाक ये पांच ज्ञानइन्द्रिय हैं और शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध ये पांच विषय हैं और पांच तन्मात्रा हैं और मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार यह अन्तःकरणचतुष्टय है और सत्व, रज, तम, ये गुणत्रय हैं ॥

देवताः पञ्चदश देवताः कर्म्मेन्द्रियाधिपतयोऽग्निरिन्द्रो विष्णुःप्रजापतिर्मित्रावरुणौ ज्ञानेन्द्रियाधिपतयो देवताः पञ्चदश दिग्वायुः सूर्यो वरुणोऽश्विनौ श्रोत्राद्यन्तःकरणाधिपतयो वासुदेवः सङ्कर्षणः प्रद्युम्नोऽनिरुद्ध इति चित्तादि कालकर्म्मस्व-

भावजीवरूप इति समस्तं यथा भवति तथा जा-
दवस्था कथ्यते ॥

देवता पन्द्रह हैं, तिन में कर्मइन्द्रियोंके अ
अग्नि, इन्द्र, विष्णु, प्रजापति, मित्रावरुण और ज्ञा
न्द्रियोंके अधिपति देवता दिक् वायु, सूर्य, वरुण
अश्विनीकुमार ये पांच हैं और अन्तःकरणके अ
देवता वासुदेव, सङ्कर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध ये हैं चित्त
काल कर्म स्वभाव जीवरूप इस समस्त समुदायको
कथंचित् जाग्रत् अवस्था कहते हैं

प्राणापानव्यानोदानसमाननागकूर्मकृकलदेवदत्त
धनञ्जया इति समस्तकालसत्ता उल्लसन्ति । काल
नाड्यधिपतयो नाडीसंख्या द्वात्रिंशत्सहस्रा
चर्म्मनाडी, शोणितनाडी, शुक्रनाडी, अस्थिनाडी
मज्जनाडी इत्यादि कालसत्तोद्भवति । विलयं या

प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान और नाग, कूर्म, कृ
देवदत्त, धनञ्जय यह समस्त कालकी सत्ता सुशोभित है
नाडियोंके अधिपति और नाडियोंकी संख्या बत्तीस
है तिनमें चर्म्मनाडी है कितनीक रुधिरनाडी हैं शुक्र
अस्थिनाडी और मज्जानाडी इत्यादि समस्त कालकी
प्रगट होती हैं और लयको प्राप्त होती हैं ॥

कर्म्मसूत्रं पापं पुण्यं सुखदुःखे इत्यादिकं मिश्र

ति जीव इन्द्रियाधिपतिरचेतनपदार्थस्य चेतनत्वकर्त्ता इति जाग्रदवस्थानिर्णयः ॥

कर्म्मरूपी सूत्र पुण्य और पाप सुख और दुःख इत्यादिक-उत्पन्न कर्त्ता है और जीव इन्द्रियोंका अधिपतिरूपसे अचेतन जडपदार्थोंको अपने संबंधसे चेतनके तुल्य बनाना है यह जाग्रत् अवस्थाका वर्णन हुआ ॥

अथ स्वप्नावस्थानिर्णयः कथ्यते। पञ्च प्राणादिवायवो दशेन्द्रियवृत्तयः पञ्च विषया अन्तःकरणचतुष्टयं, तत्र देवताचतुष्टयं कालकर्मस्वभाव इति एकत्वं यथा भवति तथा लिङ्गशरीरङ्कथ्यते हिरण्यगर्भस्तेजोमयो भवति "तेजोमयो ऽमृतमय इति श्रुतेः" तैजसोऽभिमानी विष्णुर्देवता सत्वं गुणो वासनामयो भोगः स्वप्नावस्थायां मध्यमा वाणी सूर्यस्तत्रात्मा । इति स्वप्नावस्थानिर्णयः ॥

अब स्वप्नअवस्थाका निरूपण करते हैं कि प्राण, अपान, उदान, व्यान, समान पञ्च वायु और इन्द्रियोंकी दश वृत्ति और शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध ये पांच विषय और मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार ये अन्तःकरणचतुष्टय और वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध ये चारों देवता और काल कर्म स्वभाव इस समुदायको लिंगशरीर कहते हैं और हिरण्य-

गर्भनामक परमात्माही तेजोमय है तिसमें श्रुति भी प्रमा "तेजोमयोऽमृतमय" इति श्रुतेः वह परमात्मा हिरण्यगं तेजोमय और अमृतमय है तैजस अभिमानी है, देवता वि सत्व गुण है और वासनामय भोग है मध्यमा वाणी है आत्मा सूर्य है यह स्वप्नअवस्थाका निर्णय हुआ ॥

अथ सुषुप्त्यवस्थानिर्णयः कथ्यते॥सुषुप्त्यवस्था यामेतत्कारणस्वरूपी प्राज्ञाभिमानीश्वरो देवतान न्दो भोग्यः पश्यन्ती वाणी तमोगुण इति सुषुप्त्यव स्थानिर्णयः ॥

अब सुषुप्ति अवस्थाका निर्णय करते हैं सुषुप्तिमें मिका कारण रूप प्राज्ञ, अभिमानी है और देवता ईश्व और भोग्यपदार्थ आनन्द है पश्यन्ती वाणी है और तमो है यह सुषुप्तिका वर्णन हुआ ॥

अथ तुर्यावस्थानिर्णयः कथ्यते । तुर्य्यावस्थायां ब्रह्मस्वरूपि केवलचैतन्यमात्रं सर्वोपाधिविनिर्मुक्त साक्षिमात्रमवतिष्ठते, यथा सूर्यः प्रकाशङ्करोति तत्सत्तामात्रेण लोकानाञ्चेष्टा वर्त्ततेतथेश्वरसत्ता मात्रेण जगच्चेष्टाङ्करोति यथाग्निसंयोगेनपात्रउ ष्णत्वं भवति यथा चुम्बकसत्तामात्रेणं समस्तप्र पञ्चचैतन्यता भवति ॥

अब तुर्या चतुर्थ अवस्थाका निर्णय करते हैं तुर्य्यां

स्थामें ब्रह्मस्वरूपी केवल चैतन्यमात्र सम्पूर्ण उपाधियोंसे रहित सर्वका साक्षी होकर अवस्थित रहता है जैसे सूर्य समस्त जगत्प्रपंचको प्रकाशित करता है और उसकी सत्तासे समस्त जगत् चेष्टा करता है वैसेही ईश्वरकी सत्तासे समस्त जगत् चेष्टा करता है और जैसे अग्निके संयोगसे पात्र उष्ण होजाता है और चुम्बककी सत्तासे लोहा चेष्टा करता है इसी-प्रकार ईश्वरकी सत्तासे समस्त जगत् चैतन्य प्रतीत होता है.

इति पिण्डब्रह्माण्डशोधननिमित्तार्थेऽस्मिशब्देनोत्पत्तिः कथ्यते इति परब्रह्ममायासंयोगेन परा-पश्यन्ती मध्यमा वैखरीरूपमुखेन प्रकटीभवात दर्शनमीमांसायजुर्वेद इति अस्मिशब्दनिर्णयः षष्ठःसिद्धान्तः ॥ ६ ॥

यह पिण्ड शरीर और ब्रह्माण्ड समस्त जगत्के संशोधनके निमित्तसे अस्मिशब्दकरके उत्पत्ति कथनकी यह परब्रह्म और मायाके संयोगसे परा पश्यन्ती वैखरीरूपी मुखसे प्रगट है यह मीमांसादर्शन यजुर्वेदके अनुसार अस्मिशब्द जो "अहंब्रह्मास्मि "इस महावाक्यमें आया है उसके निर्णयका छठा सिद्धान्त समाप्त हुआ ॥६॥

॥ अतःपरं सामवेदवाक्यनिर्णयः कथ्यते ॥

ग्रन्थकार इसके अनन्तर सामवेदके अन्तर्गतवाक्यका निर्णय करते हैं.

सामवेदवाक्ये पदत्रयं तत्पदं त्वंपदम् असिपदमि-
ति तत्पदेनेश्वरः त्वम्पदेन जीवोऽसिपदेन ब्रह्म
तत्र जीवेश्वरयोरुपाध्युच्छेदः ब्रह्मणस्तु नास्ति
ब्रह्मणो ह्युपाध्यवच्छेदश्चेत् तत्र श्रुतिविरुद्धम् ॥

"तत्त्वमसि" इस सामवेदके महावाक्यमें तीन पद हैं
"तत्" दूसरा "त्वम्" और तीसरा "असि" उसमें तत्
ईश्वरका ग्रहण और त्वम् पदमे जीवका और असि
ब्रह्मका उसमें जीव और ईश्वर उपाधि विशिष्ट हैं और
उपाधिरहित है यदि ब्रह्मको भी उपाधियुक्त मानलें तो श्रु
विरोध होता है.

"एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म" "नेह नानास्ति किञ्च-
न" इति श्रुतेःसत्यमुपाधिभेदेन कल्पिते जीवत्वे-
श्वरत्वे ब्रह्मण उपाधिकल्पने द्वैतमित्यौपाधिक-
मेकमनेकं वा वस्तुव्याप्तमेक एवोपाधिः स क
उपाधिः अनाद्यविद्यास्वरूपा सा च जीवेश्वरा-
श्रया तद्विपर्येव ॥

क्योंकि श्रुतिमें लिखा है कि "एकमेवाद्वितीयं ब्र
ब्रह्म एक और अद्वितीय है "नेह नानास्ति किञ्चन" इसमें संसा
ईश्वरके अतिरिक्त नाना कुछ नहीं है तो कहते हैं सत्
उपाधिके भेदसेही जीव और ईश्वर यह कल्पना किया
ब्रह्मको उपाधिकी कल्पना करनेमे द्वैतकी आपत्ति होगी

यह औपाधिक एक अनेक वस्तुओंको व्याप्त होकर स्थित रहता है वह उपाधि एकही है कौनसी उपाधि अनादि अविद्या रूप और तो उपाधि जीव और ईश्वरके आश्रय जीव और ईश्वरकोही विषय करती है.

यथा वृक्षच्छाया यथा गृहेन्धकारो यथा समुद्रे फेनो यथा नभस्यन्यत्तिष्ठति तथा ब्रह्मसत्तायां माया कल्पिता "दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतान्तरन्ति ते" इति भगवद्वाक्यात् ॥

जैसे वृक्ष और छाया और जैसे घर और अन्धकार समुद्र और फेन और जैसे आकाशमें अन्य पदार्थ स्थित रहते हैं उसी तरह ब्रह्मकी सत्तामें माया कल्पित है यह वार्ता श्रीभगवानूनेभी कही है कि, "दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया । मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतान्तरन्ति ते" ये त्रिगुणात्मिका मेरी माया देवी है और दुस्तर है, इस माया को जो पार होजाते हैं वे मेरेकोही प्राप्त होते हैं ।

तथोपनिषदि श्रूयते "अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां बह्वीःप्रजा जनयन्तीं सरूपाः। अजो ह्येको जुषमाणोनु शेते जहात्येनां भुक्तभोगामजोन्यः" । इति तैत्तिरीयारण्यकम् ॥

यह वार्त्ता उपनिषद्‌मेंभी लिखी है "अजामेकां लोहित-

शुक्लकृष्णां बह्वीः प्रजा जनयन्तीं सरूपाः" लाल और और कृष्णवर्णवाली अनेक प्रजाको उत्पन्न करनेवाली यह बकरीस्वरूप माया है "अजो ह्येको जुषमाणोऽनुशेते त्येनां भुक्तभोगामजोऽन्यः" एक अज जन्मादिरहित पर मायाको स्वीकार करके सोता है और दूसरा भोग भोग जिसके ऐसी उस मायाको त्यागदेता है यह तैत्ति यआरण्यकका वचन है-

ऋग्वेदेऽपिश्रूयते"न तं विदाथ य इमा जजानान्य युष्माकमन्तरम्बभूव। नीहारेण प्रावृता जल्प्या च असुतृप "उक्थशासश्चरन्ति" इति "शिवः शक्त्या युक्तः"इति व्याख्याप्रतिपादितत्वात् ॥

और ऋग्वेदमेंभी लिखा है कि, उस परमात्माको न जानते हुए जिसने मायाके साथ संबंध करके हमसे अ किया और जिसको अंगीकार कर आप मायाविशिष्ट हु हुआ इसप्रकार शिवशक्त्यात्मक जगत्को वा ब्रह्मको प्र पादन किया है-

"प्रकृतिः पुरुषश्चैव विद्ध्यनादी उभावपि" इति वाक्यात् प्रकृतिपुरुषयोस्तथा वेदान्तेऽपि अनाद्य विद्यां वदन्ति ॥

और श्रीभगवान्नेभी कहा है कि, "प्रकृतिः पुरुषं विद्ध्यनादी उभावपि" प्रकृति माया और पुरुष परमात्मा

दोनोंको अनादि जानो प्रकृति और पुरुषको अनादि माना है वेदान्तमेंभी अविद्याको अनादि अर्थात् उत्पत्तिरहित प्रतिपादन किया है.

तर्हि द्वैतोत्पत्तिर्भवत्यद्वैतन्नस्यादेतत्सत्यम् । ब्रह्माद्वैतमेवाविकारं विकाररहितम् । स्वप्रकाशस्वरूपं स्वतश्चैतन्यस्वरूपमखण्डदण्डायमानं व्यापकं देशतः कालतो वस्तुतः शून्यमधोर्ध्वतिर्यगनन्तम् ॥

जो प्रकृति और पुरुष अनादि हैं तो द्वैतकी सिद्धि हुई अद्वैत सिद्ध नहीं होसकता तो कहते हैं ये सत्य है—जबतक समाधान न दे तबतक ब्रह्म अद्वैत है विकाररहित है स्वप्रकाश है स्वयं चैतन्यस्वरूप है और अखण्डदण्डके समान है सर्व प्राणि पदार्थमें व्यापक है देश करके कालकरके और वस्तुकरके शून्य है अर्थात् सर्वदेश सर्वकाल और सर्ववस्तुमें व्याप्त है ऊपर नीचे तिरछा अनन्त है—

स परमात्मैक एव तदुपाधिभेदेन त्रिधा भवति जीवेश्वरब्रह्मेति तत्र माया त्रिविधा भवति अविद्या माया जीवाश्रिता मायेश्वराश्रिता मायाच किञ्चिच्छक्तिस्तु "अर्द्धमात्रास्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः" इति सप्तशतीप्रामाण्यात् ॥

वह परमात्मा एकही है उपाधिभेदसे जीव ईश्वर और

ब्रह्म तीन प्रकारका होता है और मायाभी तीन प्रकारकी अविद्या माया १ जीवके आश्रित माया २ और ईश्वर आश्रितमाया ३ और यत् किंचित् शक्ति इसमें समर्थ प्रमाणभी है "अर्द्धमात्रास्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेष जो प्रकृति अर्द्धमात्रारूप नित्यस्थित है और सर्वथा कथनकीजाती है.

सा माया ब्रह्मसत्तामात्रेण चेतना भवति किमिवाग्निसत्तामात्रेण पात्रे यथोष्णता भवति यथा सूर्यमणौ सूर्यकलायामग्नेरुत्पत्तिर्भवति निष्कारणम्। तथा ब्रह्मसत्तायां मायाविकारित्वम्भवति ॥

वह माया ब्रह्मकी सत्तासेही चेतना है किसकी नांई अग्निकी सत्तासे पात्रमें उष्णता होती है और सूर्यकान्तमणि और सूर्यकलासे जैसे अग्निकी उत्पत्ति होतीहै विना किसी कारणके उसीप्रकार ब्रह्मकी सत्तामें माया विकारी प्रतीत होती

तत्र विकारो द्विविधो मायाऽविद्या च तत्र माया प्रतिबिम्बितश्चैतन्यमीश्वर इत्युच्यते माया स्वाश्रय व्यामोहिनी अविद्या जीवव्यामोहिनी ॥

उसमें विकार दो हैं माया और अविद्या उसमें मायाविशेषता जिस चेतनमें है—उसको ईश्वर कहते हैं और अविद्याविशेषचेतनाको जीव. माया अपने आश्रय परमात्माको सबलमायाविशिष्ट अर्थात् कर्त्ता पालक संहर्त्ता बनाती है और अविद्या जीवको व्यामोह करती है—

मायाप्रतिविम्बितश्चैतन्यमीश्वरो यस्य सर्वज्ञत्वं सर्वेश्वरत्वं सर्वसंहारकत्वं सर्वप्रकाशकत्वं सर्वप्रेरकत्वं स ईश्वरोऽणिमादिसिद्ध्यष्टकदाता तस्य नाम विष्णुरिति सत्वगुणप्रधानम् ॥

मायाके प्रतिबिम्बकरके संयुक्त चेतन जो ईश्वर है सो सर्वज्ञ सर्वका स्वमी सर्वका संहारक और सर्वका प्रकाशक और प्रेरक है और वही ईश्वर अणिमा महिमा आदि अष्ट सिद्धियोंका दाता है और उसीको विष्णु यह कहते हैं और सतोगुणप्रधान है ।

तस्य स्वरूपत्रयं ब्रह्माविष्णूरुद्रइति तत्र जगदुत्पत्तिकारणं ब्रह्मा रजोगुणप्रतिविम्बितं चैतन्यं क्रियाशक्तिस्वरूपेण जगदुत्पत्तिङ्करोति तस्य विष्णुः स्वरूपं तत्पदप्रथमांशो ब्रह्मा द्वितीयांशो विष्णुर्जगत्प्रतिपालकः ॥

उस विष्णुके तीन स्वरूप हैं प्रथम ब्रह्मा द्वितीय विष्णु तृतीय रुद्र उन तीनो स्वरूपों में जगत्की उत्पत्तिका कारण ब्रह्मा है और रजोगुणकी प्रधानताके कारण क्रिया और शक्तिके रूपसे समस्त जगत प्रपञ्चको उत्पन्न करता है परन्तु उसका स्वाभाविकरूप पूर्वकथनके अनुसार विष्णु है उस परमात्मा तत पदका प्रथम अंश ब्रह्मा है और द्वितीय अंश विष्णु है सो जगत्का पालक है ।

सत्वगुणप्रतिबिम्बितश्चैतन्यं विष्णुरित्यभिधीयते॥ इच्छाशक्तिस्वरूपेण स वैकुण्ठाधिपतिस्तस्यांशावतारा मत्स्यकूर्मादयस्ते किमर्थम्भवन्ति तत्रोत्तरमुच्यते। "यदा यदा हि धर्म्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥" इति भगवद्वाक्यप्रामाण्यात् श्रुत एवानन्तशक्तिरूपेण युगपत्स्थावरजङ्गमप्रतिपालको भवति इति तत्पदद्वितीयांशः॥

सतोगुणप्रतिबिम्बितचैतन्यको विष्णु कहते हैं वही इच्छारूप शक्तिसे वैकुण्ठका अधिपति है और उसके अंशभूत मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह, वामन, आदि अवतार है ये क्यों कहे तो ग्रंथकार आपही समाधान करतेहैं कि "यदा यदा हि धर्म्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥" हेअर्जुन जबजबधर्मकी हानि और अधर्म की वृद्धि होतीहै तब तब मैं अपने अंशरूपसे अवतार लेताहूं यह श्रीभगवान्का वचन प्रमाण है सुनाहै कि अनन्तशक्ति परब्रह्म परमात्मा स्थावर वृक्ष पर्वत आदि और जंगम मनुष्य गवादिका प्रतिपालक है यह तत्पदका द्वितीय अंश है।

अथ तत्पदतृतीयांशो रुद्र इत्यभिधीयते। तमोगुणप्रतिबिम्बितचैतन्यमीश्वर इति कथ्यते कालशक्तिस्वरूपेण स्थावरजङ्गमात्मकस्य जगतः प्रलय-

ङ्करोति भैरवाद्यवतारैरनन्तकालात्माभवति "नमस्ते रुद्र मन्यव" इति श्रुतेरिति तत्पदतृतीयोंशः ॥

और तत्पदका तृतीय अंश रुद्र कहाताहै वह तमोगुण प्रधान चेतन ईश्वर है कालशक्तिके रूपसे स्थावर जंगम आत्मक जगतका प्रलय करताहै भैरवआदि अवतारोंसे अनेक कालस्वरूपको धारण करताहै उसमें श्रुति प्रमाण है कि "नमस्ते रुद्र मन्यवे" हेरुद्र आपके क्रोधको नमस्कार हैं यह तत्पदका तृतीय अंश हुआ.

तत्पदंमायाशबलं ब्रह्मेति अत एव माया ब्रह्म चेति शक्तिद्वयन्निरूप्यते मायाप्रतिबिम्बितचैतन्यमीश्वर इति कथ्यते स ईश्वरः "सूर्यकोटिप्रतीकाशो यमकोटिदुरासदः" इति श्रुतेः ॥

तत्पद मायासहित ब्रह्मका नाम है इसी वास्ते माया और ब्रह्म ये शक्तिनिरूपण कीहैं मायाप्रतिबिम्बित चैतन्यको ईश्वर कहतेहैं वह ईश्वर "सूर्यकोटिप्रतीकाशो यमकोटिदुरासदः" किरोडो सूर्यके समान प्रकाशमान और किरोडो यमके सदृश कठोर भयंकर हैं यह श्रुति प्रमाण है.

अत एव विराडधिपतिर्मोक्षाधिपतिर्ज्ञानाधिपतिर्महत्तत्त्वाधिपतिः सर्वज्ञत्वान्मनोधिबोधः स्वतन्त्रनित्यत्वादलुप्तशक्तिः "अनन्तशक्तिश्च विभोर्विदित्वा षडाहुरङ्गानि महेश्वरस्य" ॥

इसी वास्ते विराट्का अधिपति मोक्षका स्वामी ज्ञान मालिक महत्तत्वोंका अधिष्ठाता सर्वज्ञ मनका अधि बोध स्वरूप स्वतन्त्र नित्य और सर्व पदार्थोंसे अलुप्तशक्ति वाला है उसमें प्राचीन वाक्य प्रमाण है " अनन्तशक्ति विभोर्विदित्वा षड्बाहुरङ्गानि महेश्वरस्य" उस व्यापक परमा त्माकी अनन्त शक्ति जानकर और छे भुजा और शरीर महेश्वरका ज्ञान उसकी अपार शक्तिका अनुभव होता है.

अतएव श्रुतिः " सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपाद्"इतिश्रुतेः। वैकुण्ठनाथो लोकान् सृजति लतातन्तुन्यायेन जगदुत्पत्तिर्भवति जगदुत्पादन· स्वरूपेण सृजति प्रतिपालयति संहरति योग· मायारूढो भवति ॥

इसी वास्ते श्रुतिप्रमाण लिखते हैं "सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपाद्" इति वह परमात्मा हजारो मस्तक हजारों नेत्र और हजारो पाववाला । है वैकुण्ठका स्वामी पुरुषोत्तम गोलोक आदिलोकोंको उत्पन्न करता है—

जैसे एक वेलमेंसे अनेक वेल बढती और डोरा जैसे ब ताहै वैसे वह परमात्मा जगत्की उत्पत्ति करता है जगतको उत्पन्न करताहै पालताहै और संहार करताहै और योगरूपी मायामें आरूढ होताहै ।

तस्येश्वरस्यांशत्रयं ब्रह्मा विष्णू रुद्र इति स वैकु·

ण्ठाधिपतिर्विष्णुरादिपुरुषोत्तमो नाम सत्वगुणात्मकस्तस्यैव रजोगुणात्मको ब्रह्मा सत्यलोकाधिपतिस्तस्यैव तमोगुणात्मको रुद्रः कैलासाधिपतिः ॥

उस ईश्वरके तीन अंश ब्रह्मा विष्णु रुद्र यह है वह वैकुण्ठका स्वामी आदिपुरुषोत्तमनामक सत्वगुणात्मक है और रजोगुणात्मक सत्यलोकका स्वामी ब्रह्मा है और तमोगुणात्मक कैलासका अधिष्ठाता रुद्र है।

अत एव करणोपाधिरीश्वरस्य कथ्यते इति सामवेदे तत्पदविशेषणव्याख्या संक्षेपेण वेदान्तशास्त्रेण तत्पदस्वरूपाभिव्यक्तिःकथ्यते सामवेद। तत्पदप्रकारः सप्तमः सिद्धान्तः ॥ ७ ॥

इसी वास्ते ईश्वरकी कारणउपाधि कहतेहैं यह सामवेदमें तत्पदविशेषणकी व्याख्या संक्षेपसे वेदान्तशास्त्रके अनुसार तत्पद स्वरूपकी अभिव्यक्ति कथन करी सामवेदके तत्पदका निरूपण सप्तमसिद्धान्त समाप्त हुआ ॥ ७ ॥

अतः परं त्वम्पदवाक्यनिर्णयः कथ्यते "कार्योपाधिरयं जीवः कारणोपाधिरीश्वरः" इति श्रुतेः तत्र कार्योपाधिचैतन्यं जीवशब्दवाच्यमित्युच्यते स जीवोऽविद्याशक्तिप्रधानः ॥

इसके अनन्तर त्वंपदके वाक्यका निरूपण करतेहैं

" कार्योपाधिरयं जीवः कारणोपाधिरीश्वरः" कार्यउपाधि विशिष्ट यह जीव है और कारणउपाधिविशिष्ट ईश्वर है यह श्रुति प्रमाण है उसमें कार्यउपाधिविशिष्ट चैतन्य जो जीव है वो अविद्याशक्तिप्रधान है.

साऽविद्या पञ्चस्वरूपा कथ्यते तमस्तामिस्रो ऽन्धतामिस्रो मोहो महामोह इति पञ्चपर्वाऽविद्या शैशवावस्था कौमारावस्था यौवनावस्था तरुणावस्था वृद्धावस्था इति पञ्चावस्थासु यज्ज्ञानं तदविद्यास्वरूपं परमार्थरहितम् ॥

वह अविद्या पांचप्रकारके स्वरूपवाली है तम १ तामिस्र २ अन्धतामिस्र ३ मोह ४ महामोह ५ यह पांच स्वरूपवाली अविद्या है और शैशवअवस्था कौमारावस्था यौवनअवस्था और तरुणावस्थां, और वृद्धावस्था इन पांच अवस्थाओंमें जो ज्ञान है सो परमार्थरहित अविद्यास्वरूप है.

शैशवावस्थायान्न किञ्चिज्ज्ञायते केवलं स्तनपानादिकङ्करोति सुखादिकन्न जानाति केवलं चेष्टामात्रङ्करोति इति तमोगुणाविद्यायाः शैशवावस्थाभिव्यक्तिर्भवति संमताऽविद्या ॥

शैशवअवस्थामें कुछ नहीं जानता केवल स्तनपानमात्र के अतिरिक्त चेष्टा करता है यह तमोगुण प्रधान अविद्याके

प्रभावसे शैशवअवस्थाकी प्रगटता होती है यही अविद्याका स्वरूप है.

अथकौमारावस्थायां तामिस्राविद्या किञ्चिद्देहाभिमानङ्करोति मम देहो मम माता मम पिता मम दुःखं मम सुखं किञ्चित्प्रज्ञायते ॥

अब कुमार अवस्थाको दिखलाते है कि कुमारअवस्थामें तामिस्रनामक अविद्या है और वो तामिस्र अविद्या कुछ कुछ देहका अभिमान करती है जैसे यह मेरा देह है मेरी माता मेरा पिता मेरा दुःख मेरा सुख इत्यादि उस अवस्थामें प्रतीत होताहै.

परमार्थरहितं केवलं देहाभिमानङ्करोति देहाभिमानमात्रमुज्जृम्भते साकौमारावस्थासंबंधिन्यविद्या सैव तामिस्रं ज्ञानन्तस्य लक्षणमिति तामिस्रस्तल्लक्षणाविद्यांशः ॥

परमार्थसे रहित केवल देहअभिमान करनेवाली देह अभिमानको उत्तेजन करनेवाली कुमारअवस्थाको संबंध रखनेवाली वही अविद्या तामिस्रज्ञान जिसका लक्षण है वो अविद्याका अंश है.

यौवनावस्थायामन्धतामिस्रं ज्ञानन्तस्य लक्षणं देहाभिमानमात्रमुज्जृम्भते वयं सुन्दरा अहं यौवनवान् तत्र कामोद्भवङ्करोति अहन्तांममताङ्करोति

मम माता मम पिता मम भार्या मम भ्राता मम भगिनीति नानाप्रकारकामोद्भवं करोति ॥

यौवनअवस्थामें अन्धतामिस्रज्ञान है उसका लक्षण देहको अभिमान मात्र करना है हम सुन्दर हैं मैं यौवनवाला हूं और उस अवस्थामें कामका उद्भव होता है अहंकार होता है और ममत्व जैसे यह मेरी माता है ये मेरा पिता है मेरा भाई है और यह मेरी बहिन है इत्यादि अनेक ममत्वकी कामना होती है.

स्वभार्याम्परभार्यान्न जानाति स्वधनम्परधनञ्च न जानाति ये शब्दस्पर्शरूपरसगन्धाःपञ्चविषयास्तैः पीडितःअत्यन्तदुःखप्राप्तोभवति अतएव परमार्थरहितं केवलमविद्यारूपं तदेव अन्धतामिस्रनाम ।

और अपनी पराई स्त्रीको नहीं जानता और अपने पराये धनको नहीं जानता पूर्वोक्त शब्द, स्पर्श,रूप, रस, गन्ध, पांच विषयोंकरके पीडित होता है. और अतिशय दुःख पाता है. इसीलिये परमार्थ ज्ञानसे रहित केवल अविद्यास्वरूप अन्धतामिस्र नामक है.

अथ मोहलक्षणाविद्या केवलन्देहाभिमानङ्करोति मम धनं मम पुत्रा मम भार्या मम क्षेत्रमहं श्रोत्रियोऽहं ब्राह्मणो वयं क्षत्रिया वयं वैश्या वयं शूद्रा इति नानासंकल्पविकल्पजालमध्ये पतति

अत्यन्तमोहो भ्रान्तिर्भवति तन्मोहस्वरूपमविद्यानाम ॥

अब मोहलक्षण अविद्याके स्वरूपका कथन करतेहैं मोहरूपा अविद्या केवल देहको अभिमान करतीहै मेरा धन मेरा पुत्र मेरी स्त्री मेरा खेत मैं पण्डित हूँ मैं ब्राह्मण हूँ हम क्षत्रिय हैं हम वैश्य हैं वा हम शूद्र हैं—इत्यादि अनेक संकल्प विकल्पके जालमें पडता है और अतिशय मोह और भ्रान्तिको प्राप्त होता है वही मोहस्वरूप अविद्यानामसे प्रसिद्ध है.

अथ वृद्धावस्थायां महामोहप्राप्तिर्भवति तन्महामोहलक्षणमत्यन्तदेहाभिमानो भवति पुत्रपौत्रक्षेत्रादावत्यन्तं ममता भवति मम भृत्यादयो मम देशा मम सखा मम गोत्रं ममस्वजातीयो विजातीय इति स्वपरस्मिन्नत्यन्तभेदवृत्तिर्भवति ॥

अब वृद्धावस्थाका निरूपण करते हैं वृद्ध अवस्थामें महामोह होता है उस महामोहसे अतिशय करके देहके अभिमानकी वृद्धि होतीहै बेटा पोता खेत आदिमें बड़ी प्रबल ममता होजाती है मेरा नौकर मेरा देश मेरा मित्र मेरा संबंधी और मेरी जातका और परजातका इत्यादि अपने परायेमें अत्यन्त भेद बढजाता है.

अत्यन्तजाड्याधिक्येऽपि मोह एवायं रक्षणीय इति देहाभिमानस्वरूपं स्थूलोहं कृशोहं मूको

ऽहं बधिरोहमित्यभिमानग्रस्तो भवति तदभिमान रूपा महामोहाविद्या पृथग्विद्यते स्वभावज्ञानेन- केवलं देहाभिमानमात्रं परमार्थरहितं देहाभिमान- मुज्जृम्भते ॥

जडताकी अधिकतासे मोहकीही रक्षा करना यह देहा- भिमानका स्वरूप है मैं मोटाहूं पतलाहूं गूंगाहूं बहिराहूं ऐसे अभिमानसे छाजाता है उस समय अभिमानस्वरूपा महामोह- नामकी अविद्या अलग प्रतीत होतीहै स्वभावके ज्ञानसे देहका अभिमानमात्र परमार्थज्ञानसे रहित देहाभिमान रूपसेप्रतीत होता है.

एतज्ज्ञानंमहामोहाविद्यालक्षणंमहदविद्यापरिच्छि- न्नचैतन्यं जीवशब्दवाच्यमुच्यते तत्र कार्यकारणै- कत्वेन प्रपञ्चाधिष्ठितश्चैतन्यम्प्रवर्त्तते ॥

यह ज्ञान महामोहरूपी अविद्याके समान और महा अविद्या करके संयुक्त जो चेतन है सो जीवशब्द करके कथन किया जाता है उसमें कार्य और कारणकी एकतासे प्रपञ्च को स्वीकारकर चैतन्य देव व्याप्त है.

तत्र किञ्चित्कार्यकारणलक्षणं कथ्यते कारण- न्त्वेकं कार्यन्त्वनेकं तत्र दृष्टांतः यथा मृत्तिकैकैव घटास्त्वनेकाः सुवर्णमेकमलङ्काराास्त्वनेकाःचन्द्र- मास्त्वेको ज्योत्स्नास्त्वनेकाःपृथिव्येका गंधास्त्व- नेकाः सूर्य एको रश्मयस्त्वनेका उदकमेकं रसा-

स्त्वनेका वृक्ष एकः शाखास्त्वनेकाः कार्पास एको वस्त्राण्यनेकानि एवममुना प्रकारेण कारणमेकमेव कार्यन्त्वनेकविधम् ॥

वहां कुछ कार्य और कारणके लक्षण कहते हैं कारण एकही होता है और कार्य नाना होतेहैं उसमें दृष्टान्त है कि, जैसे मृत्तिका एकही पर उसके कार्य घट शराव आदि अनेक हैं सुवर्ण एकही है पर आभूषण अनेक होतेहैं चन्द्रमा एकही है पर चान्दनी प्रकाश नाना हैं पृथिवी एक पर गंध सुगन्ध दुर्गन्ध अनेक हैं सूर्य एकही है परन्तु किरण अनेक हैं और जल एक है पर उसके रस अनेक हैं वृक्ष एक है पर शाखा (डाल) अनेक हैं कपास एकही है पर उसके कार्य वस्त्र बहुत प्रकारके हैं इसी प्रकार कारण एक होताहै पर उसके कार्य अनेकविध होतेहैं—

कारणन्तु मूलप्रकृतिरेकैव जगत्कारणभूतं गुणसाम्य इति प्रकृतिकपिलोऽष्टमः सिद्धान्तः॥८॥

कारण मूलप्रकृति (अनादि) अविद्या एकही है जगत्का कारणभूत सत्त्व रज तम तीनों गुणोंकी साम्य अवस्था पर जगत् स्थावर जंगमरूप और स्वेदज उद्भिज्ज जरायुज और अण्डजरूपसे नानाप्रकारकायह है प्रकृतिरूपनिरूपणका अष्टम सिद्धान्त समाप्त हुआ ॥ ८ ॥

सा प्रकृतिस्त्रिधा भवति सात्त्विकी राजसी तामसी चेति सा प्रकृतिर्ब्रह्माश्रिता भवति "ब्रह्माश्रिता

माया स्थितिकारणम्" इति श्रुतेः । सा माया जगत्कारणहेतुर्भवति प्रकृतिकार्यं महत्तत्त्वम्महत्तत्त्वकार्यमहङ्कारोऽहङ्कारकार्यम्मनो मनःकार्यं बुद्धिर्बुद्धिकार्यं शब्दादयो विषयाः ॥

यह प्रकृति (माया) तीन प्रकारकी है. सात्त्विकी. राजसी और तामसी इस भेदसे सो वो माया ब्रह्मके आश्रित है उसमें श्रुति प्रमाण है कि "ब्रह्माश्रिता माया स्थितिकारणम्" ब्रह्मके आश्रित माया जगत्का कारण है वही ब्रह्मके आश्रयवाली माया जगत्का कारण है उस मायाका कार्य महत्तत्त्व है और महत्तत्त्वका कार्य अहंकार है और अहंकारका कार्य मन है और मनका कार्य बुद्धि है और बुद्धिका कार्य शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, ये पांच विषय हैं. और—

शब्दकार्यमाकाश आकाशकार्यं वायुर्वायुकार्यंश्चाग्निरग्निकार्यमापोऽप्कार्यं पृथिवी पृथिव्या ओषधिवनस्पतय ओषधिवनस्पतिभ्यः फलान्यन्नश्चान्नकार्यं रसो रसकार्यं रेतो रेतःकार्यं सप्तधातवस्तेषां संज्ञा रुधिरमांसादयः ॥

शब्दका कार्य आकाश, है और आकाशका कार्य वायु

---

१. शब्दका कार्य आकाश इस ग्रन्थके अनुसार लिखा है वेदान्तदर्शनके तथा (आत्मन आकाशः संभूतः) इस श्रुतिके अनुसार आत्माका कार्य आकाश है न्याय मतसे (शब्दगुणकमाकाशम्) आकाशका गुण शब्द है अथवा शब्द ब्रह्मका कार्य आकाश है. ऐसे मानो.

है और वायुका कार्य अग्नि है और अग्निका कार्य जल है और जलका कार्य पृथ्वी है और पृथ्वीका कार्य औषधि वनस्पतियां हैं और औषधि वनस्पतिका कार्य फल और अन्न है और अन्नका कार्य रस है और रसका कार्य रेत है और रेतका कार्य सात धातु हैं उन सप्तधातुओंके नाम रुधिर मांस आदि हैं.

"वसात्वङ्मांसमेदोस्थिमज्जाशुक्राणि धातवः" इति सप्त धातव एतद्धातुकार्यं शरीरमेतद्धातुभिः समस्तजीवशरीरमारभ्यतेऽमुना प्रकारेण कार्यकारणात्मकं विश्वं संसारप्रपञ्चादिशब्दैर्निरूप्यते इति तत्त्वसर्गनिर्णयः ॥

वसा १ त्वचा २ मांस ३ मेदा ४ अस्थि ५ मज्जा ६ शुक्र (वीर्य) ७ ये सप्तधातु हैं इन धातुओंका कार्य शरीर इन्ही सप्त धातुओंसे समस्त जीवशरीर बनता है इसप्रकार कार्यात्मक और कारणात्मक विश्व संसार प्रपञ्चशब्दसे कहा है यह तत्त्वोंकी उत्पत्तिका निर्णय कहा ॥

अथ जीवनिर्णयः कथ्यते। प्रथमकोशो ब्रह्म द्वितीयकोशो माया तृतीयकोशो गुणत्रयं चतुर्थकोशो विष्णुः पञ्चमकोश ईश्वरः षष्ठः कोशो रुद्रः सप्तमकोशः सनकादयश्चत्वारोऽष्टमकोशो महीदासादयो नवमकोशः स्वयंभुवादयो दशमकोशः कश्यपादय एकादशकोशः सरस्वती।

अब जीवका निर्णय कथन करतेहैं प्रथम कोश (स्थान विशेष) ब्रह्म है और द्वितीय कोश माया और तृतीय कोश गुणत्रय, चोथा कोश विष्णु है और पञ्चम कोश ईश्वर है और छठा कोश रुद्र है और सप्तमकोश सनक सनन्दन आदि चारों हैं और अष्टम कोश महीदास आदि हैं और नवम कोश स्वयंभु (ब्रह्मा) आदि हैं और दशम कोश कश्यप आदि और एकादशवाँ कोश सरस्वती है—

तदनन्तरं देवदैत्यगंधर्वसिद्धयक्षराक्षसगुह्यक-किन्नरमनुष्यपशुपक्षिमृगादयः नागा नद्यो गिरयो द्रुमादिसमस्तस्थावरजंगमाश्चतुरशीतिलक्षं जीवजन्तवः खेचरभूचराः पृथिव्यादिसप्तसर्गलोकचरा असंख्या जीवयोनयो नानाविधावकाशलक्षणं कार्यस्वरूपमेव भवति तदेतत्कार्याश्रितं चैतन्यं जीवशब्दवाच्यमुच्यते। पृथगभिमान-लक्षणं कथ्यते ॥

उसके अनन्तर देव दैत्यगन्धर्व सिद्ध यक्ष राक्षस गुह्यक किन्नर मनुष्य पशु पक्षि मृग आदि और पर्वत हाथी नदी वृक्ष आदि समस्त स्थावर जंगम चौरासी लक्ष जीव जन्तु और खेचर भूचर और पृथिवी सप्तलोकमें विचरनेवाले असंख्यात जीव योनि अनेक प्रकारका अवकाशरूप कार्य उत्पन्न होता है यही कार्यके आश्रित चैतन्य जीवशब्दवाच्य कहा जाता है, अलग अभिमान लक्षण कहाता है.

यथा घटभेदेनाकाशभेदोनेकधा घटाकाशमठाकाशादौ महाकाशस्तु एक एव यथाग्निरेक एव स्फुलिङ्गास्त्वनेका यथा सूर्य एक एव जले प्रतिबिम्बास्त्वनेकधोपाधिभेदेनैवं जीवा अनन्ता भवन्ति अमुना प्रकारेण त्वम्पदतत्पदयोः परस्परं वैलक्षण्यम्भवति ॥

जैसे घटोंके भेदसे आकाशका भेद घटाकाश मठाकाश रूपसे अनेक प्रकारका है परंतु महाकाश एकही है और जैसे अग्नि एकही है पर स्फुलिंग (चिनगारे) अनेक प्रतीत होतेहैं और जैसे सूर्य एक है पर जलमें अनेक प्रतिबिम्ब प्रतिभासित होतेहैं इसी प्रकार उपाधिभेदसे जीव अनन्त प्रतिभासित होतेहैं अतएव इसीप्रकार त्वंपद और तत्पदकी परस्पर विलक्षणता है.

उपाधिभेदेनैव वस्तुभूतं वस्तुतावदेकमेव वस्तुचैतन्यं सर्वत्रानुस्यूतमस्तीति त्वंपदशोधनं संक्षेपेणात एव तत्पदत्वंपदासिपदानां परस्परम्भेदः कथ्यते इति सामवेदस्य त्वंपदविशेषणं नवमः सिद्धान्तः ॥ ९ ॥

उपाधियोंके भेदसेही वस्तुजातकी प्रतीति होतीहै वास्तविक तो एकही सर्वत्रव्यापक चैतन्य वस्तु है यह त्वंपदका शोधन हुआ संक्षेपसे इसीवास्ते त्वंपद तत्पद असिपदोंका परस्प-

र भेद कहा है यह सामवेदके त्वंपद विशेषणका नवमां सि- द्धान्त समाप्त हुआ ॥ ९॥

अथ जीवेश्वरविभागः कथ्यते । "एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म नेह नानास्ति किञ्चन" इति श्रुतेर्विरुद्धार्थ- सत्यपदत्रयं कथ्यते तत्त्वमसीति सामवेदवाक्य- मस्ति तस्य पदत्रयङ्कथ्यते ॥

अब जीव और ईश्वरका विभाग कथन करते हैं कि "एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म नेह नानास्ति किञ्चन" ब्रह्म एक और अद्वितीय है और इस संसारमें नाना कुछ भी नहीं है इस श्रुतिके अर्थसे विरुद्ध अर्थ सत्य तीन पदोंको कथन करते हैं "तत्त्वमसि" वह तु है यह सामवेदका वाक्य है उसके तीन पद कथन करते हैं.

तत्त्वमसीति पदत्रयस्य व्याख्यानमेव क्रियते। पदत्रयेण वस्तुत्रयन्नोच्यते किन्त्वेकमेव वस्तु जीवेश्वरब्रह्मेति बुद्धिभेदेन कार्योपाधिबिम्बं चैतन्यं जीवशब्दवाच्यम् कारणोपाधिप्रतिबिम्बितश्चैतन्य- मीश्वरशब्दवाच्यम्। कार्यकारणरहिताश्चित्स्वरूप- मखण्डदण्डायमानं ब्रह्मासिपदवाच्यम् ॥

तत् त्वम् असि, इन तीनों पदाका व्याख्यान ही करते हैं कुछ तीन पदोंसे तीन वस्तुओंको नहा प्रतिपादन करते किन्तु वस्तु तो एकही है जीव ईश्वर और ब्रह्म यह बुद्धिके भेदसे हैं

कार्य उपाधिमें प्रतिबिम्बित चैतन्यको जीव कहते हैं और कारणरूप उपाधिमें प्रतिबिम्बित चैतन्यको ईश्वर कहते हैं और कार्य कारण दोनोंसे रहित चित्स्वरूपअखण्ड एकरस ब्रह्म असिपदसे कहा है.

अतएवासिपदेन ब्रह्मोच्यत तच्च ब्रह्म स्वरूपतः परिपूर्णम्भवति मायादिशेषप्रपञ्चविनिर्मुक्तं गुण-दोषरहितं केवलं सत्तामात्रमासिपदेन परं ब्रह्म चिदानन्दस्वरूपमुच्यते ॥

अतएव असि पदसे ब्रह्म कहते हैं वह ब्रह्म स्वरूपसे परिपूर्ण है मायासे आदिले शेषनागपर्यन्त समस्त प्रपंचसे रहित है और गुण और दोषोंसे रहित है केवल सत्तामात्र है इस हेतु असिपदसे ब्रह्म चित् आनन्द स्वरूप कहाता है.

तद्ब्रह्माकाशादिसमस्तप्रपञ्चसाक्षिभूतं जीवेश्वर-योर्नियन्तृ मायायाः प्रवर्तकं कालकर्मस्वभाव उपादानस्वरूपं यत्सत्तामात्रेण समस्तप्रपञ्चान्तर्वर्तित्वेनोल्लसति "सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोक्षिशिरोमुखम्। सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति" इति श्रुतेः ॥

वह ब्रह्म आकाशआदि समस्त जगत् प्रपञ्चका साक्षी है और जीव और ईश्वरका नियन्ता है और मायाका प्रवर्तक है और काल, कर्म, स्वभाव इसका उपादानकारण (उत्प-

त्तिका स्थान वा हेतु) है जो ब्रह्म अपनी केवल सत्तासे समस्त प्रपञ्चका अन्तर्यामी रूपसे विलास कररहा है इस अर्थमें श्रुति भी प्रमाण है "सर्वतः पाणिपादन्तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् । सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति" उस परब्रह्म परमात्माके चारों ओर हाथ हैं और चारों और पांव हैं और चारोंओर आंख हैं और मस्तक और मुख हैं और चारों ओर कान हैं समस्त संसार में जो व्याप्त होरहा है ऐसा वह ब्रह्म है.

अतएव सर्वव्यापकत्वन्तत्रोच्यते स्वतः प्रकाशत्वं स्वतश्चैतन्यत्वं स्वतन्त्रत्वं स्वतः ज्ञातृत्वं स्वतः प्रतिपालकत्वं स्वतः संहारकत्वं स परमात्मेति कथ्यते "अस्ति प्रशस्तः प्रकृतेः परस्तात् आदित्यवर्णं तमसः परस्तात्" इति श्रुतेः ॥

अतएव सर्वव्यापक कहा है स्वयंप्रकाश स्वयंचेतन स्वतन्त्र स्वयंज्ञाता स्वयंप्रतिपालन करनेवाला और संहार नाशकारक वह परमात्मा कहाता है वहां श्रुतिप्रमाण लिखते हैं कि "अस्ति प्रशस्तः प्रकृतेःपरस्तादादित्यवर्णं तमसःपरस्तात्" इति ॥ वह परमात्मा प्रशस्त अर्थात् महान् है और प्रकृति नाम मायासे पर है आदित्य सूर्यके समान वर्णवाला है और अन्धकारसे पर है.

अत एव स परमात्मा समस्तविषयगोचरोत्यन्तसू-क्ष्मात्सूक्ष्मतरो भवति दूराद्दूरतरः "यतो वाचो निवर्त्तन्तेऽप्राप्य मनसा सह"इति श्रुतेः अतः कारणात् त्वंपदतत्पदासिपदानां जीवेश्वरब्रह्मेति ब्रह्मसत्यत्वम्प्रतिपाद्यते ॥

इसीलिये वह परमात्मा समस्त विषयोंको प्रकाश करनेवाला सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म (लघुसे भी लघु) छोटेसे छोटा और दूरसे भी दूर अर्थात् बड़ेसे बड़ा है उसमें श्रुति प्रमाण है "यतो वाचो निवर्त्तन्तेऽ प्राप्य मनसा सह" इति जिस पर-मात्माको न पाकर अर्थात् उसके पास न पहुँचकर मनसहित वाणी उलटी लौट आती है अर्थात् वह परमात्मा मन वाणीका अविषय है अतएव त्वंपद और तत्पद और असिपदसे जीव, ईश्वर और ब्रह्म प्रतिपादित है इतनेसे ब्रह्मका अस्तित्व प्रति-पादन किया.

उपाधिभेदेनानन्ताः कार्योपाधिरूपाश्चतन्याधि-ष्ठिताः सुखदुःखपापपुण्यस्वर्गनरकबन्धमो-क्षज्ञानाज्ञानानि नानायोनिषु संसरन्त्युत्क्रामन्ति च लिङ्गशरीरस्थूलशरीराभिमानी स जी-वात्मा पञ्चकोशाभिमानी वा ॥

माया और अविद्यारूप उपाधिके भेदसे कार्य उपाधिरूपको धारणकर चैतन्यके आश्रितं हो सुख दुःख और पुण्य पाप

और स्वर्ग, नरक, बन्ध, और मोक्ष ज्ञान और अज्ञानको अनेककल्पना करता है और अनेक योनियोंमें जन्मता है और मरता है और लिङ्गशरीर और स्थूलशरीरका अभिमानी अथवा पञ्चकोशका अभिमानी जीवात्मा कहाता है.

अन्नमयप्राणमयमनोमयविज्ञानमयानन्दमयाश्चेति पञ्च कोशा भवन्ति अत एव अन्नमयप्राणमयमनोमयविज्ञानमयानन्दमयाश्चेति पञ्चकोशानामेकैकमन्तर्भाग्भवति विवेकात्प्रकाशात्प्रकाशितात्मेति शङ्कराचार्यैश्चोक्तम् ॥

अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्दमय यह पञ्चकोश हैं इसीवास्ते अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्दमय इन पञ्चकोशोंका एकमें एकका अन्तर्भाव अर्थात् लय होता है और श्रीशङ्कराचार्यजी महाराजने भी कहा है कि "विवेकात्प्रकाशात्प्रकाशितात्मा" विवेक अर्थात् विचाररूपी प्रकाशका आत्मा प्रकाशक है अथवा विवेक अर्थात् ज्ञानसे आत्मा प्रकाशित है.

एतत्पञ्चकोशावेष्टितचैतन्यात्मा जीवशब्दवाच्यो जीवङ्करोतीति जीवशब्दवाच्यता अथ जीवविशेषाः केवलमुपाधिमात्रम्भिन्नं न वस्तुभेदो वस्तुगत्यैकमेव चैतन्यं यथा घटाकाशमठाकाशमहाकाशादिवत् तत्रांशस्त्वेक एव तथा जीवेश्वरब्रह्मेति एकमेव वस्तु ॥

इन पूर्वोक्त पञ्चकोशोंकरके लपेटा हुआ चैतन्य आत्मा जीव शब्दका वाच्य हैं और जीवको उत्पन्न करता है इसलिये जीवशब्दकी वाच्यता ब्रह्ममें है और जीवविशेष जितने हैं अविद्यारूप उपाधिसे भिन्न प्रतीत होते हैं वस्तु जो चेतन है उसमें भेद नहीं है वास्तविक तो एकही चैतन्य है जैसे घटाकाश मठाकाश और महाकाश इनमें अंश तो एकही आकाशका है इसीप्रकार जीव, ईश्वर और ब्रह्म एकही वस्तु है.

य ईश्वरः कर्त्ता पालकः संहर्त्ता सर्वमोक्षदाता नियन्ता समस्तजीवानाङ्कर्म्मफलदाता स ईश्वरः स वैकुण्ठनाथोऽनन्तकोटिब्रह्माण्डविग्रहस्तपसा सत्यलोकमधिष्ठाता तिष्ठति।"परित्राणाय साधूनां विनाशायच दुष्कृताम् ॥ धर्म्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे"इति भगवद्वाक्यप्रामाण्यात् ॥

जो ईश्वर समस्त जगत्का कर्ता पालनकर्ता और नाशका करनेवाला समस्त जीवोंको मोक्षका दाता और सकलका नियामक और सकल प्राणियोंको कर्मोंके अनुसार फलका दाता हैं सोई ईश्वर वैकुण्ठका स्वामी और अनन्तकोटिब्रह्माण्डरूप और अपने तपके प्रभावसे सत्यलोकका अधिपतिरूपसे विराजमान है इसमें श्रीमद्भगवद्गीताका प्रमाण है कि "परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्। धर्म्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे॥" श्रेष्ठपुरुषोंकी रक्षा

करनेको और दुष्टजीवोंका नाश करनेको और धर्मके स्थापन करनेको हे अर्जुन! मैं युग युगमें अवतार लेता हूं यह भगवान् कहते हैं. इस वचनसे सृष्टिकर्त्ता पालयिता और संहारकर्त्ता ईश्वरही है ।

स ईश्वरो निर्विशेषः "कार्योपाधिरयं जीवः कारणोपाधिरीश्वरः ॥ कार्यकारणतां हित्वा पूर्णबोधोऽवशिष्यते" इति शाङ्करभाष्यप्रामाण्यात् यथा घटभङ्गेनाकाशभङ्गो न भवति अविद्यानिवृत्तिर्मोक्षः साविद्याविलासनिवृत्तिर्मोक्ष आनन्दप्राप्तिर्वा मोक्ष इति ॥

वह परत्र परमात्मा निर्विशेष है और कार्यरूप उपाधि जीव है और कारणरूप उपाधिविशिष्ट ईश्वर है इसमें शाङ्करभाष्य का प्रमाण है "कार्योपाधिरयं जीवःकारणोपाधिरीश्वरः । कार्य कारणतांहित्वापूर्णबोधोऽवशिष्यते" कार्यरूपा और कारणरूपा उपाधि जो माया और अविद्या है उनका त्याग करनेसे पूर्णबोध अर्थात् सत् चित् आनन्दरूप अवशिष्ट रहता है॥ जैसे घडेके फूटनेसे आकाशकी कुछ क्षति नहीं होती इसी प्रकार अविद्यारूप उपाधिके नाशसे निर्विशेष ब्रह्मकी भी कुछ क्षति नहीं होती और अविद्याकी निवृ निवृत्ति त्ति वा अविद्याके कार्य जगत्की अथवा आनन्दकी प्राप्तिका नाम मोक्ष है.

"ज्ञानन्तु कैवल्यम्" इति श्रुतेः आकाशशरीरं

अज्ञात एव तद्ब्रह्म त्वमसि॥सामवेदवाक्यस्य तत्पद-त्रयव्याख्यानप्रकारेण जीवेश्वरब्रह्मनिर्णयो दशम-सिद्धान्तः ॥ १० ॥

और ज्ञान तो मोक्षस्वरूपही है इसमें श्रुति प्रमाण है "ज्ञानन्तु कैवल्यम्" इति॥ज्ञान तो मोक्ष है॥और आकाश शरीरवाला ब्रह्म है इसलिये वो ब्रह्म तू है यह सामवेदके तीन पदोंके व्याख्यानद्वारा जीव ईश्वर और ब्रह्मके निर्णयका दशवाँ सिद्धान्त समाप्त हुआ ॥ १० ॥

अथ प्रकारान्तरेण तत्त्वमसीतिवाक्यव्याख्यानं क्रियते।तत्त्वमसीति श्रुतेस्तच्छब्देन पूर्वं परामृश्यते त्वंशब्देनापरं परामृश्यते तत्परस्परं विरुद्धम्॥

अब अन्यप्रकारसे तत्त्वमसि इस वाक्यका व्याख्यान करते हैं ॥ तत्त्वमसीतिश्रुतेः॥तत्त्वमसि यह श्रुति है तत् शब्दसे पूर्वका परामर्श (आकर्षण) करना और त्वंशब्दसे परका आकर्षण करना परन्तु यह परस्पर विरुद्ध है

तद्यत् ब्रह्म पूर्वं परामृष्टम् एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म नाम-रूपवर्जितं ब्रह्म शुद्धं बुद्धं मुक्तस्वभावम्॥आदित्य-वर्णन्तमसः परस्तादिति भगवद्वचनप्रामाण्यात् समस्तप्रपञ्चसाक्षिभूतङ्केवलन्तुर्य्यावस्थामात्रम्प्र-तितिष्ठति ॥

पूर्व पर करके आकर्षण (आकर्षण अर्थात् आक्षेपित)

किया हुआ वह ब्रह्म "एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म" एक और अद्वितीय ब्रह्म है इस श्रुतिके प्रमाणसे ब्रह्म नाम और रूप इन करके रहित है शुद्ध अर्थात् माया अविद्यासे रहित कमलदलवत् निर्लेप है और बुद्ध ज्ञानस्वरूप है और मुक्तस्वभाव है इसमें श्रीकृष्णचन्द्र परमात्माका वचन भी प्रमाण है कि "आदित्यवर्णन्तमसः परस्तात्" वह परमात्मा सूर्यके समान वर्णवाला और अन्धकारसे पर है अतएव समस्त प्रपञ्चका साक्षीरूप होकर विराजमान है.

स परमात्मा जीवो न भवति कस्मादनन्तशक्तिमयत्वात् अनन्तप्रकाशमयत्वादनन्तसुखमयत्वादनन्तानन्दमयत्वादनन्तकोटिब्रह्माण्डाधारभूतत्वादनन्तकोटिब्रह्माण्डप्रकाशकत्वादधोर्ध्वमध्ये यस्यान्तो नास्ति सोऽनन्त इत्युच्यते "ॐ खं ब्रह्मेति उपासीत" इति श्रुतेः ॥

पूर्वोक्तलक्षणसम्पन्न परमात्मा जीव नहीं होसकता क्योंकि परमात्मा अनन्तशक्तिवाला और असंख्यात प्रकाशोंकरके संयुक्त है और असंख्य सुखमय अनन्त आनन्दमय अनन्तकोड ब्रह्माण्डका आधार और अनन्त कोड ब्रह्माण्डका प्रकाशक है ऊपर नीचे और बीचमें अर्थात् आकाश पातालमें जिसका अन्त न होवे वो अनन्त कहाताहै और श्रुतिमें भी लिखा है कि "ॐ खं ब्रह्मेति उपासीत" ओंकाररूप और आका-

शके समान परिपूर्ण ब्रह्मकी उपासना कर्त्तव्य है इतने कथनसे अल्पज्ञ अल्पशक्तिविशिष्ट अन्तवान् जीव ब्रह्म नहीं है.

अत एव जीवविकल्पेश्वरविकल्पब्रह्मविकल्पेति विकल्पत्रयरहितङ्केवलं साक्षात्कारस्वरूपं स परमात्मा तत्पदेन विशेषित इति तत्पदार्थः ॥

इसीलिये जीव विकल्प (आशंका) अर्थात् नाम और ईश्वर नाम और ब्रह्म नाम (ब्रह्मसंज्ञा) इन तीनों विकल्प अर्थात् संज्ञाओंसे रहित केवल साक्षात् (ज्ञानस्वरूप) वह परमात्मा तत्पदसे निरूपित किया है यह तत्पदका अर्थ हुआ.

अथ त्वम्पदार्थव्याख्यानं क्रियते त्वम्पदमपरपरम् अपरञ्च मायारूपं सा माया ब्रह्माश्रिता ब्रह्मविषया यथा लूतातन्तुर्यथा गेहेन्धकारो यथा वृक्षच्छाया भवति तथा सा माया त्वम्पदवाच्या त्वम्पदवाच्यमायावेष्टितश्चैतन्यस्वरूपत्रयम्पृथक् ॥

अब त्वम्पदके अर्थका व्याख्यान करते हैं त्वंपद अपर शब्दका पर्याय है यहां अपरशब्दसे मायाका ग्रहण किया है वो माया ब्रह्मके आश्रित है और ब्रह्मको विषय करनेवाली है जैसे कमलतन्तु वा मकड़ीका जाला और जैसे घरमें अंधेरा और जैसे वृक्ष और छाया है इसी प्रकार वह माया त्वंपदकी वाच्य है त्वंपदवाच्य जो माया है उसकरके आवेष्टित चैतन्यके तीन स्वरूप पृथक् हैं जैसे—

विश्वतैजसप्राज्ञाः स्थूलसूक्ष्मकारणात्मकं सत्त्वं रजस्तमो ब्रह्मा विष्णूरुद्रो जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तयःश्वेतम्पीतङ्कृष्णं विराड्हिरण्यगर्भः कारणमिति व्याख्यानकृतात्रिविधमायाचेष्टितस्वरूपेण वटवृक्षवत् जले जलाशयवत् ।

विश्व तैजस और प्राज्ञ स्थूल सूक्ष्म और कारण सत्त्व रज और तम ब्रह्मा विष्णु और रुद्र जाग्रत् स्वप्न और सुषुप्ति श्वेत पीत और श्याम. विराट्हिरण्यगर्भ और कारण इस व्याख्यानके अनुसार त्रिविध मायाकी चेष्टाके स्वरूपसे जैसे बड़का वृक्ष और जलमें जलाशय (तलाव) की नांई.

अतएवैकैव मायाऽनन्ता भवति पञ्चविंशतितत्त्वात्मकस्वरूपा पञ्चविंशतितत्त्वानि पञ्च कर्मेन्द्रियाणि पञ्च ज्ञानेन्द्रियाणि च पञ्च महाभूतानि पञ्च विषयाः अन्तःकरणचतुष्टयं मूलप्रकृतिरित्यादिसमस्तंत्वम्पदवाच्यविशेषः ॥

अत एव माया एकही अनन्त है पचीस तत्त्वोंवाली पचीस तत्त्वोंको कहते हैं कि, पांच कर्मेन्द्रिय पांच ज्ञानेन्द्रिय और पांच महाभूत पांच विषय और अन्तःकरणका समूह चार और मूलप्रकृति ये सर्व त्वंपदके वाच्यविशेष अर्थात् त्वंपदको विषय करनेवाले हैं.

"षड्विंशको महाविष्णुः" इति श्रुतेःअत एव तत्पदन

ब्रह्म त्वम्पदेन माया असिपदेन जीवः शुद्धब्रह्म अत एव सामवेदपूर्वपक्ष उत्तरपक्षश्च पूर्वपक्षो जीवेश्वर-ब्रह्मनिर्णयेनैकमेव तद्ब्रह्म त्रिविधा निरूप्यते विश्व-तैजसप्राज्ञो विश्वो विश्वाश्रितस्तैजस ईश्वराश्रितः प्राज्ञो ब्रह्माश्रितो ब्रह्मांश ईश्वर ईश्वरांशो जीवः॥ "ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः" इति स्मृतेः॥

इसमें श्रुति भी प्रमाण है कि "षड्विंशको महाविष्णुः" इति छब्बीस तत्त्वों करके युक्त महाविष्णु है इसवास्ते तत्पद-से ब्रह्म त्वम्पदसे माया असिपदसे जीव शब्दब्रह्मात्मक है अतएव सामवेदके तत्त्वमसि वाक्यका पूर्वपक्ष और उत्तरपक्ष कहे उसमें पूर्वपक्षसे जीव ईश्वर और ब्रह्मका निर्णय करनेसे एकही है परन्तु उसी ब्रह्मको तीनप्रकारसे कहा है जैसे विश्व तैजस प्राज्ञ विश्वके आश्रित जो है सो विश्व है और ईश्वर-के आश्रित तैजस है और ब्रह्मके आश्रित प्राज्ञ है. और ब्रह्मका अंश ईश्वर है और ईश्वरका अंश जीव है गीतामें भी कहा है कि "ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः" जीव-लोकमें मेराही अंश सनातन जीवरूप है यह अर्जुनके प्रति भगवान् कहते हैं.

अत एव तत्पदत्वम्पदासिपदानां सत्यत्वम्प्रति-पाद्यते उपाधिभेदमात्रन्निरूप्यते वस्तुगत्यैकमेवा-द्वितीयं ब्रह्म॥ "एक एवहि भूतात्मा सर्वभूतेषु संस्थितः। एकधा बहुधा चैव दृश्यते जलचन्द्रवत्" ॥ इति

स्मृतेः पूर्वपक्षे दृष्टान्तसिद्धान्तयोस्तत्त्वमसीति वाक्यस्यार्थद्वयम् ।

इसीवास्ते तत्पद त्वंपद और असिपदकी सत्यता प्रतिपादन की यह केवल उपाधिका भेदमात्र निरूपणहे वास्तविक तो ब्रह्म एक और अद्वितीय है यह स्मृतिमें भी लिखा है कि "एक एव हि भूतात्मा सर्वभूतेषु संस्थितः॥ एकधा बहुधा चैव दृश्यते जलचन्द्रवत्" एकही परमात्मा समस्त प्राणियोंमें स्थित है और एक वा अनेक रूपसे प्रतीत होताहे जैसे जलमें एकही चन्द्र अनेक प्रतीत होते हैं, पूर्वपक्षमें दृष्टान्त और सिद्धान्त और तत्त्वमसि इस वाक्यके दो अर्थ निरूपण किये हैं.

अत उत्तरपक्षे द्रष्टृदृश्यपदार्थनिर्णयः कथ्यते द्रष्टृब्रह्म एकमेव॥ "एको देवः सर्वभूतान्तरात्मा" इति श्रुतेस्तत्र दृष्टान्तमाह रविर्लोकचेष्टानिमित्तं यथेति स परमात्मा शुद्धो बुद्धो मुक्तस्वभावो निर्गुणः समस्तप्रपञ्चरहितः केवलमाकाशवद्व्यापकः शब्दगुणकमाकाशं निःशब्दं ब्रह्म उच्यते इति शृणु अतएव स परमात्मा स्वतश्चैतन्यः स्वप्रकाशो जीवविकल्पद्वयरहित ईश्वरविकल्पद्वयरहितः॥

इसके अनन्तर दृश्य द्रष्टा इन पदार्थोंका निर्णय करते हैं कि द्रष्टा ब्रह्म एकही है इसमें श्रुतिभी प्रमाण है "एकोदे-

वः सर्वभूतान्तरात्मा" एक परमात्मा सर्व प्राणियोंकी आन्तर आत्मा है उसमें दृष्टान्तभी कहते हैं जैसे सूर्य समस्त प्राणियोंकी चेष्टाका कारण है इसी प्रकार परमात्माको समझो वह पूर्वप्रतिपादित परमात्मा शुद्ध ज्ञानस्वरूप स्वभावसे ही मुक्त और निर्गुण है समस्त जगत्प्रपञ्चसे रहित केवल आकाशकी नाईं व्यापक है परन्तु आकाश शब्दरूप गुणवाला है और वह परमात्मा निःशब्द अर्थात् निर्गुण है तहां कहते हैं कि, सुनिये अतएव वह परमात्मा स्वतश्चैतन्य और स्वयंप्रकाश है और जीव और ईश्वरमें माया अविद्यारूपी शंकायें हैं पर वह परमात्मा आशङ्कामात्रसे रहित है.

कथं व्यापकत्वं यत्र व्यापकत्वन्तत्र विकल्पो न संभवति अनन्तशक्तिमयत्वात् अत एव ब्रह्म द्रष्टा माया दृश्यादृश्यपदार्थः किञ्चित्प्रत्ययादिसमस्तप्रपञ्चकार्यकारणात्मक इति द्रष्टृदृश्य विवेकादिरेकादशः सिद्धान्तः ॥ ११ ॥

तब व्यापकता कैसे जहां व्यापकता होतीहै वहां विकल्प नहीं होसकता तो कहते हैं कि, अनन्तशक्तिवाला होनेके कारण इसीवास्ते ब्रह्म द्रष्टा है और माया दृश्यादृश्य पदार्थ है कुछ विश्वासयुक्त समस्त जगत् प्रपञ्चकी कार्यकारणरूपी है यह द्रष्टा और दृश्यके विवेचनका ग्यारवां सिद्धान्त समाप्त हुआ ११

अथ तत्पदवाच्यः कथ्यते तत्पदेन ब्रह्म त्वंपदेन मायाऽसिपदेनेश्वरः श्वेतकेतुपदेन परमहंस इति

परमहंसपरिव्राजकाचार्यमतेन स परमात्मा सत्तामात्रेण परापश्यन्तीमध्यमावैखरीरूपेणब्रह्मणः पश्चिममुखेनाभिव्यक्तोभवति काण्डत्रयं मन्त्र-काण्डं ज्ञानकाण्डं कर्मकाण्डमिति सामवेद-वाक्यनिरूपणं सामवेदवाक्यपदत्रयस्य व्याख्यान-निर्णयो नाम द्वादश सिद्धान्तः ॥ १२ ॥

अब तत्पदके वाच्यका निरूपण करते हैं तत्पदसे ब्रह्म और त्वंपदसे माया और असिपदसे ईश्वर और श्वेतकेतु पदसे परमहंसका ग्रहण है यह परमहंसपरिव्राजकाचार्यके मतमें निर्णय हुआ वह परमात्मा अपना सत्तामात्रसे परापश्यंती मध्यमावैखरीरूपसे ब्रह्मके पश्चिममुखसे प्रादुर्भूत है वेदमें काण्डत्रय है मंत्रकाण्ड ज्ञानकाण्ड और कर्मकाण्ड यह सामवेद के तत्त्वमसि इन तीनो पदोंके व्याख्यानके निर्णयका बारहवां सिद्धान्त समाप्त हुआ ॥ १२ ॥

अथाथर्वणवेदसम्बन्धिवाक्यार्थनिर्णयः संक्षेपेण कथ्यते।अयमात्मा ब्रह्मेति श्रुतेः॥अयंशब्दः प्रत्य-भिज्ञानवचनः सोयं देवदत्त इत्यादिवत् सृष्टेः पूर्वं सृष्टिमध्ये सृष्ट्यन्ते सोयमात्मेति प्रसिद्धमेव परा-सृष्टिर्नाम प्रत्यक्षवचनम् ॥

अब अथर्वणवेदसंबंधि वाक्यके अर्थका निर्णय करते हैं "अयमात्मा ब्रह्मेति" यह श्रुति है इस श्रुतिमें तीन शब्द हैं

अयम् आत्मा और ब्रह्म जिसमें अयंशब्द प्रत्यभिज्ञान अर्थात् स्मृतिका बोधक है जैसे (सोयंदेवदत्तः) ये वो देवदत्त है कौनसा जो पहिले कभी कहीं देखाथा इत्यादि शब्दोंकी नांई अयंशब्द है जगत्की उत्पत्तिसे पहिले जगत्के मध्यमें और अन्तमें यह वो आत्मा है यह व्यवहार प्रसिद्धही है यह ईश्वरीय परा सृष्टि है यह प्रत्यक्ष है ॥

इदंशब्देन च नित्यत्वं प्रतिपाद्यते यथाऽनन्ता घटपटा दृष्टाः पटास्तु भिन्नाः सर्वथा न घटा यथा देहदृष्ट्या तथा देहिनामित्यवधारयति वाक्यवृत्तौ तथा समस्तप्रपञ्चदृष्टा भिन्नाः पृथग्भूताः साक्ष्य· वतिष्ठते क इव सूर्य एकः प्रकाशेन जगत्प्रकाश· यति तथेश्वरः स्वप्रकाशेन मायाम्प्रकाशयति ॥

इदंशब्दसे नित्यत्व प्रतिपादन करते हैं जैसे असंख्य घट पट और द्रष्टा हैं परन्तु घट और पट द्रष्टासे अलग हैं और घट (घडा) पट (कपडे) से भिन्न है जैसे देहकी दृष्टिसे देही अर्थात् देहवाला मनुष्य जीव भिन्न हैं यह वाक्य वृत्ति नामक ग्रंथमें लिखा है वैसेही समस्त जगत् प्रपंच भिन्न है और द्रष्टा भिन्न है द्रष्टा (देखनेवाला) समस्त प्रपञ्चका साक्षी होकर स्थित रहता है किसकी नांई जैसे सुर्य एकही अपने प्रकाशसे समस्त जगत्को प्रकाशित करता है इसीप्रकार ईश्वर अपने प्रकाशसे मायाको प्रकाशित करता है ।

परस्परमनादिसंबंधेन स परमात्मा मूलप्रकृतिसाक्षिभूतोऽहंकारसाक्षिभूत आकाशवाय्वग्न्यप्पृथिव्यादिसाक्षिभूतः श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणमित्यादि पञ्चज्ञानेन्द्रियसाक्षिभूतो वाक्पाणिपादपायूपस्थपञ्चकर्मेन्द्रियसाक्षिभूतो जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यवस्थात्रयसाक्षिभूतः सत्त्वरजस्तमोगुणत्रयसाक्षिभूतोऽण्डजस्वेदजजरायुजोद्भिज्जादिकानां चतुर्णां साक्षिभूतः ॥

परस्पर अनादि संबंधके प्रभावसे वह सर्वव्यापी परमात्मा मूल प्रकृति (अनादिमाया) का साक्षी है और अहंकारका साक्षीरूप और आकाश वायु अग्नि जल पृथ्वी आदि समस्त का साक्षीभूत और कान, नाक, आंख, जिह्वा, और चर्म इन पञ्च ज्ञान इन्द्रियोंका साक्षी और हाथ पांव वाणी गुदा लिंग इन पञ्च कर्म इन्द्रियोंका साक्षीरूप और जाग्रत् स्वप्न और सुषुप्ति इन तीनों अवस्थाओंका साक्षी और सत्त्व रज और तम इन तीनों गुणोंका साक्षी है और अण्डज स्वेदज जरायुज और उद्भिज्ज इस चार प्रकारकी सृष्टिका साक्षी है.

ब्रह्मविष्णुरुद्रादिशेषनागपर्यन्तं समस्तनानायोनिषु पृथग्जातिस्वभावरूपेण तिष्ठति तदभिन्नम्परमात्मस्वरूपमनन्तकोटिब्रह्माण्डप्रकाशकं

श्चिन्मात्रमवतिष्ठते सोऽयंशब्दवाच्यः परमात्मा ब्रह्मेति ॥

ब्रह्मा विष्णु रुद्रसे आदिले शेषनागपर्यन्त अखिल अनेक योनियोंमें अलग अलग जातिस्वभावके रूपसे स्थित है प्रत्येक प्राणी पदार्थमें व्याप्त वह परमात्माका स्वरूप अनन्त क्रोड ब्रह्माण्डका प्रकाशरूप चैतन्यमात्र अवस्थित है वही सोयं शब्दवाच्य परमात्मा है ॥

यत् चैतन्यमात्रेण जगतश्चैतन्यम्भवति क इव यथा सूर्यप्रकाशेन चक्षुःप्रकाशो भवति तत् चक्षुः सूर्यावलोकनङ्करोति यथाग्निसत्तामात्रेण पात्रतापो भवति तथा तत्सत्तामात्रेण समस्तावान्तर्वर्तिनः पदार्थाः सचेतना भवन्ति ॥

जिसकी चेतनतासे जगत् चैतन्य है किसकी नाईं जैसे सूर्यके प्रकाशसे चक्षु प्रकाशित है और वही चक्षु सूर्यको देखता है और जैसे अग्निकी सत्तासे पात्र गरम होता है इसीप्रकार उस परमात्माकी सत्तामात्रसे समस्त ब्रह्माण्डके मध्यवर्त्ती पदार्थ सचेतन हैं.

अत एवैकं ज्ञानं त्रिधा च भवति ब्रह्म स्वतश्चैतन्यं स्वतः प्रकाशं स्वतन्त्रश्चेति माया तदाश्रिता तद्विषया चैतन्यात्मा भवति महदादिसमस्तपदार्थो जडः स्वतश्चैतन्यपरतन्त्रो भवति अतएव ब्रह्मव्यापकत्वेन मायाया अपि व्यापकत्वम्भवति ॥

इसीवास्ते एकही ज्ञान त्रिविध है और ब्रह्म स्वतश्चैतन्य और स्वतः प्रकाश और स्वतन्त्र है माया उसी ब्रह्मके आश्रित होकर उसको विषय करती हुई चैतन्यस्वरूपा प्रतीत होती है आकाशसे आदि समस्त जगत् प्रपंच जड़ है पर स्वयंप्रकाश चेतनके आधीन है इसीकारण ब्रह्मकी व्यापकतासे मायाकीभी व्यापकता है.

कथंयदान्तरस्तदाश्रयाद्विषयो भवति कार्यभागत्रयं व्यापकरूपं महदादीनामपि ज्ञानं पूर्णज्ञानेज्ञातृत्वङ्कथम्भवति उपनिषद्वाक्यप्रमाणम् ॥ "आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः" इतिश्रुतेरेतत्सत्यम् ॥

और यदान्तर अर्थात् मायाको कार्य उसके आश्रयसे प्रतीत होते हैं मायाके कार्यके तीन अस्ति भाति प्रिय यह भाग व्यापकरूप हैं और आकशादिकोंका ज्ञानभी व्यापकरूप है अब कहते हैं कि ज्ञानमें ज्ञातृत्व यह कैसे होसकता है तो कहते हैं की उपनिषदका वाक्य प्रमाण है कि "आत्मा वाअरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः" याज्ञवल्क्य महर्षि कहते हैं कि हे मैत्रेयी यह आत्मा देखनेके योग्य है और सुननेके योग्य और मनन करनेके योग्य और निदिध्यासन करनेके योग्य है इति तो उत्तर देता है कि यह सत्य है.

अतएव देवतात्वेनावलक्ष्यते न तु सम्पूर्णं ज्ञायते यथा घटाकाशो ज्ञायते तथा पूर्णाकाशोपि ज्ञायते तथा सर्वमृत्तिकाप्यनुमीयते तथाल्पजलेन महाजलञ्जानाति अमुना प्रमाणेन नानाविधानि जानीयात्॥

इसीवास्ते देवतारूपसे देखताहै समस्त नहीं प्रतीत होता जैसे घटाकाश जानाजाता है वैसेही पूर्ण आकाशभी जाना जाताहै और उसीप्रकार एक घटज्ञानसे समस्त मृत्तिकाओंका ज्ञान होताहै ऐसेही थोडे जलसे महान्‌जलको जानलेताहै इसीप्रकारके प्रमाणसे नानाविध जितने पदार्थ हैं उनको जानो॥

अणुप्रमाणेन बृहत्प्रमाणं यथा जानाति तथान्तःकरणचेष्टितेन चैतन्यं ज्ञायते "हृदयकोशे चिदादित्ये सदादि भाति निरन्तरम्" इति श्रुतेः हृदयकमलमध्ये दीपवत् वेदसारं ज्योतिर्ज्ञायते ॥

जैसे अणु अर्थात् लघुसेभी लघु प्रमाणके ज्ञानसे भारी प्रमाणको जानलेताहै इसीप्रकार अन्तःकरणकी चेष्टासे चेतन को जाननाचाहिये इसमें श्रुति प्रमाण है कि "हृदयकोशे चिदादित्ये सदादि भाति निरंतरम्" इति आदित्य अर्थात् प्रकाशरूप हृदयकोशमें आदि सत् चित् निरन्तर प्रतीत होताहै हृदयकमलमें दीपकके समान वेदसार ज्योति जैसे प्रतीत होताहै

तथायमात्मेति अयंशब्दः स्वप्रकाशं वदति यथा सोयंदेवदत्त इत्यनेन कालवस्तुस्वभावावस्था-परित्यागेन केवलं देवदत्तस्वरूपमात्रं गृह्यते तथा-यमात्मा ब्रह्मेति शाङ्करभाष्यप्रामाण्यात् यथायंश-ब्दविशेषेण स्वप्रकाशत्वं स्वतश्चैतन्यत्वं स्वतन्त्र-त्वमिच्छाशक्तित्वं क्रियाशक्तिरूपत्वश्चोत्पद्यते ॥

तैसेही "अयमात्मा" यह आत्मा यह समझना चाहिये अयंशब्द आत्माकी प्रकाशकताको कहताहै जैसे सोयं देवदत्तः वही ये देवदत्त है जो काशीमें देखाथा और अब नाशिकमें देख-रहेहैं इतने कथनसे काल, वस्तु, भाव, अवस्था, इसका परित्याग करके केवल देवदत्तकी आकृतिमात्रका ग्रहण होताहै उससमय काल शीत था संध्या थी दश मनुष्य इसके साथ थे अच्छे वस्त्र आभूषण धारणकिया था इससमय गरमी है प्रातःकाल है और एकाकी मलीनवस्त्र आभूषणहीन नाशिकमें देखते हैं परन्तु पिण्ड वही देवदत्तका है वैसेही यह आत्मा ब्रह्म है इस शाङ्कर-भाष्यके प्रमाणसे आत्माको जानो और जैसे अयं शब्दके विशेषणसे स्वप्रकाश, स्वयंचेतन, स्वतन्त्र, इच्छाशक्ति, और क्रियाशक्तिरूप उत्पन्नहुआ प्रतीत होताहै. ॥

ब्रह्मादिकीटपर्यन्तं मशकेभ्यः समस्तप्राणि-मात्रान्तर्यामित्वेन शोधकशक्तिरूपत्वं सोयमात्मा शब्दादनुमीयते इत्ययंशब्दनिर्णयइत्यथर्वणवाक्य-

शब्दव्याख्यानं नाम त्रयोदशः सिद्धान्तः ॥ १३ ॥

ब्रह्मासे आदिले कीटतक मशकप्रभृति समस्तप्राणिमात्रका अन्तर्यामिरूप होकर संशोधनशक्तिवाला "सोयमात्मा" यह वही आत्मा है इस शब्दसे अनुमान करते हैं यह अर्थशब्दका निर्णय अथर्वणवेदके वाक्यके शब्दका व्याख्यान नामक तेरहवां सिद्धान्त समाप्त हुआ ॥ १३ ॥

अथात्मशब्दव्याख्याननिर्णयः कथ्यते । आत्मा जगदुत्पत्तिस्थितिविक्षेपरूपन्निरूप्यते। जगदङ्कुरकं सच्चिदानंदमापद्यत इति शांकरभाष्यप्रामाण्यात्तस्मात्पञ्च पृथिव्यादयःपरमात्मनः समुत्पन्नाः "आत्मन आकाशः सम्भूत आकाशाद्वायुर्वायोरग्निरग्नेरापः अद्भ्यः पृथ्वी पृथिव्या ओषधय ओषधीभ्योन्नमन्नात्पुरुषः" इतिश्रुतेः तस्मादात्मा समस्तजगदुत्पत्तिस्थानमनुमीयते ॥

अब आत्माशब्दके व्याख्यानका निर्णय करतेहैं आत्माजगत्की उत्पत्ति और जगत्की स्थिति और विनाशका कारणरूप निरूपित है सत् चित् आनन्दक्षलणवाला आत्मा जगत्के अंकुररूपको प्राप्त होताहै इस शांकरभाष्यके प्रमाणसे उस परमात्मासे पृथिवी आदि पांच उत्पन्न हुआहैं इस अर्थमें श्रुति प्रमाण है कि "आत्मन आकाशः सम्भूत आकाशाद्वायुर्वायोरग्निरग्नेरापः अद्भ्यः पृथ्वीःपृथिव्या ओषधय ओषधीभ्योऽन्नमन्नात्पुरुषः" इति आत्मासे आकाश उत्पन्न हुआ और आका-

शसे पवन पवनसे अग्नि और अग्निसे जल और जलसे पृथिवी और पृथिवीसे औषधी उत्पन्न हुई और औषधियोंसे अन्न और अन्नसे जीव उत्पन्न हुए इसलिये आत्मा समस्तजगत्-का उत्पत्तिस्थान अनुमान होताहै.

अतएवात्मानन्तकोटिब्रह्माण्डबीजरूपं संसारवृक्ष-रूपन्निरूप्यते॥"ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थंप्राहु-रव्ययम्।छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद सवेद-वित्"॥इति भगवद्वाक्यं प्रमाणम्। तथा च श्रूयते "त्रिपादूर्ध्वं उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः।ततो विष्वङ्व्यक्रामत्साशनानशने अभि"इति॥ऊर्ध्वं-ब्रह्म समस्तप्रपञ्चस्योपरि अन्तश्च नित्यं शुद्धं बुद्धं मुक्तस्वभावं निर्गुणं निरामयं निरञ्जनम् ॥

इसीकारण आत्मा अनन्त ब्रह्माण्डका बीजरुप और सं-सारवृक्षका स्वरूप कहाहै ॥ जिसकी जड ऊपर है और नी-चे शाखा है और वेद जिसके पत्ते हैं ऐसा अव्यय कभी नाश को न प्राप्त होनेवाला अश्वत्थ पीपलका वृक्ष है उस वृक्षको जिसने जाना है वही वेदवेत्ता ज्ञानी है इस भगवान्के वचन-से तथा श्रुतिमें भी लिखाहै कि "त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पा-दोऽस्येहाभवत्पुनः । ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अभि" इति पुरुष परमात्मा प्रथम त्रिपाद प्रगट हुआ फिर संसार रूप एक पाद उत्पन्न हुआ तदनन्तर विश्वरूप होकर समस्त-

में व्याप्त होगया– समस्त जगत् प्रपञ्चके ऊपर नीचे और मध्यमें ब्रह्मही है वह नित्य है शुद्ध है ज्ञानस्वरूप है मुक्तस्वभाव और निर्गुण नीरोग और निरञ्जन है. ॥

तस्य ब्रह्मणःशक्तिर्नवधा कथ्यते।सर्वज्ञभावमनादिबोधस्वतन्त्रमलिप्तशक्तिम् ॥ "अनन्तशक्तिश्च विभोर्विदित्वा षड्बाहुरङ्गानि महेश्वरस्य" ॥ इच्छाशक्तिः क्रियाशक्तिर्ज्ञानशक्तिस्त्रिशक्तयः।एवं नवविधा शक्तिर्माया स परमात्मा कथ्यते स जगद्बीजभूतमूलकन्दस्वरूपं तस्य कन्दस्य त्रयोऽङ्कुरा भवंति कालकर्मस्वभावा इति इतीति किमङ्कुरत्रयात्–मूलप्रकृतिरूपवृक्षस्योत्पत्तिर्भवति ॥

उस ब्रह्मकी नवधा शक्ति कही है सर्वज्ञभाव अनादिबोध स्वतंत्र अलिप्तशक्ति " विभु परमात्माकी अनन्त शक्ति और छैह बाहु और अङ्ग महेश्वरके जान " और इच्छाशक्ति, क्रियाशक्ति और ज्ञानशक्ति यह तीन शक्तियां इसप्रकार नवविधशक्ति और मायारूप वह परमात्मा कहाहै वह जगत्का बीजभूत मूलकन्दस्वरूप है उस कन्दके तीन अंकुर हैं काल कर्म स्वभाव यह तीन अंकुर क्या तो कहतेहैं कि, अंकुरत्रयसे मूलमायारूप वृक्षकी उत्पत्ति हैं. ॥

तस्या मूलप्रकृत्या नवविधाः शाखा भवन्ति ताश्चेत्थं प्रथमाशाखा महत्तत्वं द्वितीया शाखाहं-

कारस्तृतीया शाखा मनश्चतुर्थी शाखा बुद्धिः पञ्चमी शाखा नभः षष्ठी शाखा वायुः सप्तमी शाखाऽग्निरष्टमी शाखाऽऽपो नवमी पृथिवीति नव-विधाः शाखा अत्यन्तस्थूलरूपाअपरिमितास्तस्य वृक्षस्य शाखाः प्रतिदशशतधा सहस्रधा भवन्ति॥

उस मूलप्रकृतिकी नवविधा शाखा हैं वे शाखा इसप्रकार हैं प्रथमशाखा महत्तत्त्व है और दूसरी शाखा अहंकार है तीसरी शाखा मन है और चौथी शाखा बुद्धि और पांचमी शाखा आकाश है और छठी शाखा पवन और सातवी शाखा अग्नि है और आठवी शाखा जल और नवमी शाखा पृथिवी है यह अत्यन्त स्थूलरूप उस वृक्षकी नव शाखायें है उन प्रत्येक शाखाओंके प्रति दश और शत और सहस्रों प्रकार होते हैं॥

तथा च तस्य वृक्षस्य विषयाः पञ्चकर्मेन्द्रियाणि वाक्पाणिपादपायूपस्थानि पञ्चज्ञानेन्द्रियाणि श्रोत्रं चक्षूरसना नासिका त्वगिति दश शाखाः तस्य विषयाः—पञ्च शब्दस्पर्शरूपरसगन्धा इति तस्य वृक्षस्य वर्णस्वरूपाणि षट् शुक्लज्योतिः श्यामनीलश्वेतरक्तपीतानि तस्य वृक्षस्य शाखा गुण उत्पत्तिश्चतुर्द्धा अण्डजस्वेदजजरायुजोद्भिज्जा इति तस्य वृक्षस्य पर्णानि चतुर्द्धा ऋग्वेदो यजु-र्वेदः सामवेदोऽथर्ववेद इति एतदेव ब्रह्मस्वरूपम्॥

इसीप्रकार उस वृक्षके विषयोंको गिनाते हैं कि, वाणी १ हाथ२पांव ३ गुदा ४ और लिङ्ग ५ यह पांच कर्म इन्द्रिय और कान १ आंख २ जीभ ३ नाक ४ और चर्म ५ यह पांच ज्ञानइन्द्रिय और दश शाखाओंके विषय शब्द स्पर्श रूप रस और गन्ध ये पांच उस वृक्षके वर्णके स्वरूप छे हैं प्रकाश १ श्याम २ नील ३ रक्त ४ श्वेत ५ और पीत ६ ये उस वृक्षकी शाखाओंके गुणोंकी उत्पत्ति चारप्रकारकी है अण्डज, स्वेदज २ जरायुज ३ और उद्भिज्ज ४ इनकी और उस वृक्षके ऋग्वेद १ यजुर्वेद २ सामवेद ३ और अथर्वण ४ ये चार पत्ते हैं येही ब्रह्मका स्वरूप है.

तत्रशब्दभेदाश्चतुर्दशविद्योत्पत्तिस्थानानि उपवेदा अष्टादश पुराणानि अष्टादशस्मृतयः भारतञ्च काव्यनाटकालङ्कारसाहित्यसङ्गीतपिङ्गलज्योतिषवैदिकानि षड्दर्शनानि सर्वसांख्यमीमांसावेदान्तन्यायवैशेषिकाः पातञ्जलमन्त्रशास्त्राणिपर्णानि ॥

उसमें शब्दके भेद चौदहविद्याकी उत्पत्तिके स्थान हैं और उपवेद अठारह पुराण और अठारहों स्मृतियां महाभारत और काव्य नाटक अलंकार साहित्य संगीत और पिङ्गल ज्योतिष वैदिक और सांख्य १ मीमांसा २ वेदान्त ३ न्याय ४ वैशेषिक ५ पातञ्जल (योग) ६ ये छे और मन्त्रशास्त्र ये सर्व दर्शन पत्ते हैं.

तस्य वृक्षस्य पुष्पन्नवप्रकारम् ॥ श्रवणंकीर्तनं विष्णोः स्मरणम्पादसेवनम्॥अर्चनं वन्दनन्दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ॥ तस्यवृक्षस्य फलानि चत्वारि धर्मोर्थः कामो मोक्ष इति तस्य वृक्षस्य विस्तारःकश्चिन्निरूप्यते मूलान्यनन्तानि नास्ति अन्तोयेषां तानि अनन्तानि ॥

उस जगदन्तरात्मारूपवृक्षके पुष्प नवप्रकारके हैं जैसे श्रीहरि कीर्तन, कथा आदि और स्वरूपका श्रवणकरना, और स्मरण अर्थात् ईश्वरचिन्तन, और पाद चरणोंका सेवन, पूजन, स्तुति सेवा, और मित्रता, अर्थात् प्रेम और अपनी आत्माको उसमें अर्पण करना यह नव पुष्प हैं और उस वृक्षके फल चार हैं धर्म १ अर्थ २ काम ३ मोक्ष ४ ये और उस वृक्षका कुछ विस्तार कथनकरने योग्य है उसके मूलोंका अंत नहीं है.

अपारमतिसूक्ष्ममतिस्थूलं देशकालवस्तुस्वरूपमपरिमितम्मर्यादारहितमनादिस्वरूपं स परमात्मानन्तकोटिब्रह्माण्डाकारस्वरूपं जीवरूपज्योतिः। "सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्त्तयः सम्भवंतियाः ॥ तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता" इति भगवद्गीतासु तच्च मूलमतिसूक्ष्मं वटबीजप्रायम् ॥

और पाररहित अति छोटा और बडेसे बड़ा देशकाल और वस्तुरूप जिसका प्रमाण न होसके अवधिरहित. और

आदिरहित अनादि वह परमात्मा अनन्तकोटिब्रह्माण्डके आकारका जीवरूप ज्योति है स्मृतिमें भी लिखा है कि " सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्त्तयः सम्भवन्ति याः ॥ तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता " ॥ हे कौन्तेय अर्जुन! समस्त योनियोंके मध्यमें जो जो जीवोंकी आकृतियां हैं उनका मैं हीं योनि और बीजका दाता हूं क्षेत्ररूप और बीजरूप मैंहीं हूं यह श्रीकृष्ण परमात्माका वाक्य है वह मूल (जड) अतिसूक्ष्म वटवृक्षके बीजके समान है.

यथा वटवृक्षबीजान्युल्लसन्ति तेषां ब्रह्माण्डानां मध्यएकमेव ब्रह्माण्डसंख्यासंक्षेपेण ब्रह्मप्रकारेण निरूप्यते ॥ "आनन्दमूलगुणपल्लवतत्त्वशाखा- वेदान्तमोक्षफलपुष्परसादिकीर्णः ॥ चेतोविहङ्ग हरितुङ्गतरुं विहाय संसारशुष्कविटपे वद किङ्करोषि" ॥ इति श्रुतेः अतएवोर्ध्वमूलमुपरि मूलमधः शाखाः कालकर्मस्वभावमूलप्रकृत्यादयः परस्परक्षोभेण समस्तप्रपञ्चा उल्लसन्ति ॥

जैसे वटवृक्षके बीज प्रस्फुटित होते हैं वैसेही उन ब्रह्माण्डोंके मध्यमें एकही ब्रह्माण्डकी संख्या संक्षेपसे ब्रह्मके समान निरूपण करते हैं उसमें प्रमाण है कि ॥ "आनन्दमूलगुणपल्लवतत्वशाखा वेदान्तमोक्षफलपुष्परसादिकीर्णाः ॥ चेतोविहङ्ग हरितुङ्गतरुं विहाय संसारशुष्कविटपेवद

किङ्करोपि" ॥ उस ब्रह्माण्डरूप वृक्षकी आनन्दजड़ है और सत्व रज तम तीनो गुण पत्ते हैं पञ्चतत्व शाखायें हैं और वेदान्त और मोक्षरूपी फल. पुष्प. और रसआदिकोंसे व्याप्त है हे चित्तपक्षी ऐसे हरिरूपवृक्षको छोड़ संसाररूप शुष्कवृक्षमें क्या करता है. इसी कारण ऊपर और नीचे शाखायें हैं कालकर्म स्वभाव मूलप्रकृति प्रभृति समस्त जगत् प्रपञ्च परस्परके विक्षेपसे विलसित होरहा है.

तत्रकाल उपादानं कर्म प्रेरकस्वरूपं स्वभावश्चैतन्यस्वरूपः मूलप्रकृतिर्वैकारिकस्वरूपाऽऽत्माऽविनाशिस्वरूपः कालकर्मस्वभावरूपोऽत एवात्मस्वरूपज्ञानीयान्माया ब्रह्मणश्छायावत् छाया वैकारिकस्वरूपा · कालकर्म्मस्वभावात्मा स्वतन्त्रश्चैतन्यस्वरूपः स्वप्रकाशो नित्यो माया तदाश्रितास्तद्विपया अनादिचैतन्योनाद्यविद्याच ॥

उसमें काल उपादान करण है. और कर्मके प्रेरणका स्वरूप हैं और स्वभावसे चैतन्य स्वरूपहै. और मूलप्रकृति विकारवाली है. और आत्मा अविनाशी विनाशरहित है. और कालकर्मके स्वभावरूप है. अतएव आत्माका स्वरूप जाने. माया ब्रह्मकी छायाके समान है छाया कालकर्म स्वभाव इस विकारी स्वरूपवाली है और आत्मा स्वतन्त्र चैतन्यस्वरूप और प्रकाशस्वरूप और नित्य है माया उसके

आश्रित तद्विषया और अनादिचैतन्यके संबंधवाली अनादि अविद्या है ।

अत्र किञ्चिद्भेदो गृहसंबंध्यन्धकारो यथा वृक्ष-संबंधिनी वृक्षच्छाया यथाऽग्निसंबंधी धूमस्तथा ब्रह्मसंबंधिनी माया त्रिगुणात्मिका ब्रह्म निर्गुणं निर्वि-कारं स्वतश्चैतन्यं माया गुणमयी नित्यचैतन्या माया समवायरूपेण परिणमति वृक्षाकारेण स वृक्षः कालकर्मस्वभावयोगेनानेकप्रकारेण वृद्धिम्प्रा-प्नोति ॥

यहां कुछ थोडा अभेद दिखलाते हैं जैसे गृहसंबंधी अन्धकार और जैसे वृक्षके संबंधवाली वृक्षकी छाया और जैसे अग्निसंबंधी धुआं है इसीतरह ब्रह्मसंबंधी माया सत्त्व रज तम इन तीन गुणोंवाली है और ब्रह्म निर्गुण निर्विकार स्वतः चैतन्य है और माया गुणमयी है नित्यचैतन्य है वही माया संबंधरूपसे वृक्षाकाररूप होजाती है वह वृक्ष काल, कर्म, स्वभावोंके योगसे अनेकप्रकारसे वृद्धिको प्राप्त होता है ।

प्रकृतिम्पुरुषञ्चैव विद्ध्यनादी उभावपि॥विकारांश्च गुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसम्भवान् ॥ इति भगव-द्गीतायाम्।अनुवृक्षस्थूलसङ्गभावश्च प्रतिषिध्यते॥ "सर्वत्र भयसंयुक्तः प्रकृत्या पुरुषेण च"॥इति भाग-वते आत्मशब्दो जगद्बीजाङ्कुरो वा सत्यम् एतस्मा-

त्ससततमिति सर्वत्र स्मृतयः आत्मा प्रथमाङ्कुरः कालोद्वितीयाङ्कुरः स्वभावोनाम जीवात्मेति ॥

माया और परमात्मा ये दोनों अनादि हैं और विकार और गुण ये मायासे उत्पन्न हुए हैं यह भगवद्गीतामें कहा है प्रतिवृक्ष स्थूल और सूक्ष्मभावका प्रतिषेध किया है "सर्वत्र भयसंयुक्तः प्रकृत्या पुरुषेण च" माया और ब्रह्मकरके सर्वदा भय संयुक्त हैं यह भागवतमें कहा है आत्मशब्द जगत्का बीज वा अंकुर है यह सत्य है इससे सदा सर्वत्र स्मरण किया है जिसमें आत्मा प्रथम अङ्कुर है काल दूसरा अङ्कुर है स्वभाव जीवात्मा ये हैं.

आत्माबीजं चतुर्द्धा ब्रह्मकूटस्थं प्रारब्धरूपेण विस्तारम्प्राप्नोति बीजरूपं ब्रह्मकूटस्थामाया प्रारब्धं कर्मस्वरूपं कालोत्पत्तिस्थितिप्रलयस्वरूप-जीवात्मकः समस्तप्रपञ्चनाचेतनस्वरूपोऽचैतन्यै-श्चैतन्याधिष्ठितश्चैतन्यम्भवति अतएवब्रह्मचैतन्यं ब्रह्मचतुर्द्धा भवति वासुदेवो बीजरूपेण सङ्कर्षणः-कालरूपेण प्रद्युम्नः कर्मरूपेणानिरुद्धो जीवरूपेणेति ब्रह्मरूपं माया पञ्चविंशतितत्त्वात्मिका सा प्राप्य चतुर्द्धा ब्रह्म सम्पद्यते समस्तव्यवस्थान महत्तत्त्वात्मकं संसारवृक्षाकारन्तिष्ठति ॥

और आत्मरूपी बीज चारप्रकारकाहै और ब्रह्म कूटस्थ और प्रारब्धरूपसे विस्तृत होता है और ब्रह्म कूटस्थ प्रारब्ध और

कर्मस्वरूप जो बीज है सो काल उत्पत्ति स्थिति और प्रलय स्वरूप हो जीवरूप समस्त जगत् प्रपञ्चकरके अचेतन होकर चेतनके आश्रयसे चेतन प्रतीत होता है अत एव चैतन्यरूप ब्रह्म चारप्रकारका होताहै वासुदेव बीजरूपसे संकर्षण कालरूपसे और प्रद्युम्न कर्मरूपसे और अनिरुद्ध जीवरूपसे ब्रह्मके रूपको पचीस तत्त्वात्मक माया प्राप्त होकर ब्रह्मको चार प्रकारका करदेती है और समस्त कार्यजात महत्तत्त्वात्मक संसारवृक्षका आकार होजाती है.

अथ प्रथमपरिणामे निरूप्यते-प्रथमं वैकुण्ठस्थानं महत्तत्त्वात्मकं तन्मध्ये ज्योतिर्मयं तेजोमयं ज्ञानमयमानन्दमयं सुखमयं तस्यवैकुण्ठस्याधिष्ठातादिनारायणश्चतुर्भुजः शंखचक्रगदापद्मकिरीटकुण्डलकौतुभवनमालामुद्रिकाकङ्कणकटिसूत्रमेखलादिनानाभूषणः श्यामसुन्दरःकमलनयनःकमलचरणःकमलहस्तोऽतिलावण्यवानन्तकोटिशक्तिव्याप्तवान् वैकुण्ठाधीशः सूर्यकोटिप्रतीकाशो यमकोटिदुरासद इत्यादिविशेषणसंयुक्तः सभगवान् ॥

अब प्रथम परिणामका निरूपण करते हैं प्रथम वैकुण्ठस्थान महत्तत्त्ववाला है उसके मध्यमें ज्योतिर्मय तेजोमय ज्ञानमय आनन्दप्रचुर सुखमय आदिनारायण चतुर्भुजदेव उस

वैकुण्ठका अधिष्ठाता है और शंख, चक्र,गदा,पद्म,किरीट,कण्डल,कौस्तु,मवनमाला,अंगूठी,कंकण,पीताम्बर,कोंधनी आदि भूषणों करके विभूषित और श्यामसुन्दर कमलनयन कमलके सदृश चरण और हस्तवाला सुन्दरसे सुंदर अनन्तकोटि शक्तियोंसे परिपूर्ण वैकुण्ठका स्वामी अनन्तकोटिसूर्यके समान और यमके समान दुरासद असह्य इत्यादि विशेषणविशिष्ट वह परमात्मा भगवान् विराजमान है. ॥

तस्य शक्तयोऽणिमा महिमा गरिमेशत्वं वशित्वञ्च प्रतिकाम्यमिच्छासिद्धिर्मुक्तिसिद्धिः सर्वकामप्रदायिन्यः वैकुण्ठस्य द्वारपालाः अणिमादयः सिद्धयः अतएव स वैकुण्ठनाथ एकाकी न रमते तत् द्वितीयमिच्छति स एवात्मा द्विधा भवति पतिश्च पत्नीच स वैकुण्ठनाथः शिवशक्त्यात्मको भवति॥ "श्रीश्वते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपम्" इति श्रुतिः॥

उस परमात्माकी शक्तियां अणिमा,महिमा,गरिमा,ईशत्व, वशित्व प्रतिकाम्य और इच्छाशक्ति, मुक्तिशक्ति, ये आठों सिद्धियां सर्व कामनाओंकी देनेवाली हैं और वैकुण्ठके द्वारपाल अणिमादि सिद्धियां हैं इसीकारण वह वैकुण्ठका नाथ एकाकी नहीं क्रीडा करता वह दूसरेकी इच्छा करता है और पतिपत्नी रूपसे दो विध होताहै अर्थात् वह वैकुण्ठनाथ शिवशक्त्या-

त्मक होता है इसमें श्रुति प्रमाण है"श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्या-
व होरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपम्" हे परमात्मन्! तुमारी लक्ष्मी
और श्री दो पत्नी स्त्री हैं दिन और रात दास वा दासी हैं
नक्षत्र तुह्मारा रूप हैं॥

अत एव लक्ष्मीनारायणात्मकं स्थित्युपलक्षणं स वैकुण्ठनाथः "सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्" इत्यादिनानाविशेषणेन विशेषितः स महापुरुषः सगुणं ब्रह्मेत्युच्यते पुरुषोत्तमो नाम त्रैलोक्यपालनश्चतुर्भुजो भवति तस्य स्त्रियो लक्ष्मीसदृश्यो भवन्ति ॥

इसी कारण लक्ष्मीनारायणआत्मक संसारकी स्थिति मूल वह वैकुण्ठनाथ"सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्" हजारों मस्तक हजारो नेत्र और हजारो पादवाला वह पुरुष परमात्मा इत्यादि नानाविशेषणोंकरके विशिष्ट सगुणब्रह्म पुरुषोत्तम कहाता है उस त्रिलोकीनाथकी चार भुजा हैं और लक्ष्मी सरीखी स्त्रियां हैं ॥

तस्य वृक्षस्य प्रथमविटपो वैकुण्ठो द्वितीयविटपः शिवलोकस्तृतीयविटपः सत्यलोकश्चतुर्थविटपो ब्रह्मलोकः पञ्चमविटपः सूर्यलोकः षष्ठविटपो यमलोकः सप्तमविटपो जनलोकोऽष्टमविटपो भूर्लोको नवमविटपो नक्षत्रलोको दशमविटपश्चन्द्र-लोक एकादशविटपोऽग्निलोको द्वादशविटपो

यमलोकः त्रयोदशविटपो नैर्ऋतलोकश्चतुर्दश विटपो वरुणलोकः पञ्चदशविटपो वायुलोकः षोडशविटपः कुबेरलोकः सप्तदशविटप ईशान-लोकस्तदनन्तरं मेरुशिखरे विंशतिविटपः सर्वे लोकाः एकविंशतिविटपो ब्रह्मलोकः ॥ २१ ॥

अब उस परमात्मारूप वृक्षकी परिगणना करतेहैं कि,प्रथम वृक्ष वैकुण्ठ है द्वितीयवृक्ष शिवलोक तीसरा सत्यलोक और चौथा वृक्ष ब्रह्मलोक पञ्चमवृक्ष सूर्यलोक और छठा यमलोक सातवाँ जनलोक हैं और आठवा वृक्ष भूलोक नवमा वृक्ष नक्षत्रलोक दशमां चन्द्रलोक और ग्यारहवा वृक्ष अग्निलोक है और बारवां यमलोक तेरवां वृक्ष नैर्ऋतलोक और चौद-हवां वृक्ष वरुणलोक पंदरहवां विटप वायु लोक सोलहवां कुबेर-लोक और सत्तरहवाँ वृक्ष ईशानलोक उसके अनन्तर मेरुके शिखरपर वीस वृक्ष गोलोकादि हैं इक्कीसवां वृक्ष ब्रह्मलोक है.

ब्रह्मलोकानन्तरमृषिरित्युच्यते ततोऽधःसप्तपाताल-लोकाः शेषनागपर्य्यन्ता नानाविधप्रकाराः स्थावर-जङ्गमस्वरूपा देवमनुष्यातिर्यगादिकीटपतङ्गाः समस्तविश्वात्मसत्तामात्रेणोल्लसन्ति च॥"नवाअरे पुत्राणाङ्कामाय पुत्राः प्रिया भवन्ति आत्मनस्तु कामाय पुत्राः प्रिया भवन्ति ॥" इति श्रुतेः ॥

ब्रह्मलोकके पश्चात् ऋषि कहाताहै उसके नीचे सात पाताल. अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल,

पाताल, आदि शेषनागपर्यन्त नानाप्रकारके स्थावर जंगमस्वरूप देव तिर्यक्‌ मनुष्यआदि कीट पतंग समस्त विश्व (संसार) आत्माको केवल सत्तासे प्रतीत होता है इसमें श्रुति प्रमाण है कि, "न वाअरे पुत्राणां कामाय पुत्राः प्रिया भ वन्ति आत्मनस्तु कामाय पुत्राः प्रिया भवन्ति" इति श्रुतिः ॥ अरे मैत्रेयी! पुत्रकामनाके अर्थ पुत्र प्रिय नहीं लगते हैं तौ अपनी कामनाके अर्थ पुत्र प्यारे लगते हैं ॥

आत्मशब्देन समस्तजगदुत्पत्तिस्थानं सत्यस्व-रूपमुच्यते आत्मव्यतिरेकेण किञ्चिदपि नास्ति "सर्वं विष्णुमयञ्जगदिति" अत एव "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" इत्यात्मव्यतिरेकेण सर्वपदार्था जडरूपा एवं यत्र चैतन्यन्तत्रात्माधिष्ठानेन सर्वञ्चैतन्यम्भ-वति जडत्वन्नास्ति स आत्मा जगद्वीजरूपेण वैकुण्ठादिशेषनागपर्यन्तं स्थावरजङ्गमात्मकं जगदात्मावेति अथर्वणवेदीयवाक्यगतात्मशब्द-निर्णयो नाम चतुर्दशः सिद्धान्तः ॥ १४ ॥

आत्माशब्दसे समस्तजगत्‌का उत्पत्तिस्थान सत्यस्वरूप कहाताहै आत्माके अतिरिक्त कुछ भी नहीं है क्योंकि "सर्वं विष्णुमयं जगत्" समस्त जगत् विष्णुमय है अतएव "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" समस्त जगत् यह ब्रह्महै इत्यादि प्रमाणोंसे आत्माके अतिरिक्त समस्त जडरूप है इसलिये जहां चैतन्य है उस चैतन्यके आधारसे समस्त चैतन्य होरहा है और जड नहीं है वह आत्म

जगत्को बीजरूप हो वैकुण्ठसे आदि शेषनागपर्यन्त स्थावर, जंगम, आत्मक समस्त आत्मारूप वा आत्मा है अथर्वण वेदके अयमात्मा ब्रह्म इस वाक्यके आत्मशब्दके अर्थका निर्णय चौदहवां सिद्धान्त समाप्त हुवा ॥ १४ ॥

अथ परब्रह्मनिर्णयः कथ्यते बृहत्त्वाद्ब्रह्म अणु वृहत् कृशं स्थूलमित्ययं धर्म्मौ ब्रह्मणि प्रवर्त्तते बृहत्त्वाच्च सर्वव्यापकत्वं ब्रह्मणि प्रतिपाद्यते आकाशवत्पूर्णमात्मनि वेद्यमखण्डदण्डायमानं सर्वानुस्यूतम् ॥ "समो नागेन समो मशकेन सम एभिस्त्रिभिर्लोकैः" इति श्रुतेः॥ तथा—भाति मे "यतो वाचो निवर्त्तन्ते अप्राप्य मनसा सह" इति श्रुतेः केवलसाक्षिस्वरूपं ब्रह्म ॥

अब परब्रह्मका निर्णय करते हैं बृहत्त्वाद्ब्रह्म अर्थात् व्यापक होनेसे ब्रह्मसंज्ञा है छोटा, बडा, दुबला, मोटा, ये धर्म ब्रह्ममें प्रवृत्त होतेहैं महान् होनेसे सर्वमें व्यापकता ब्रह्मकी है आकाशके समान परिपूर्ण ब्रह्म है आत्मा ज्ञानस्वरूप और अखण्डदण्डाकार सर्वमें अनुस्यूत (ओतप्रोत) है इस में श्रुति प्रमाणहै कि॥ "समो नागेन समो मशकेन सम एभिस्त्रिभिर्लोकैः" ॥ इति श्रुतिः॥ वह ब्रह्म हाथीके और मच्छरके समान है तथा इन लोकोंके समान है. अर्थात् छोटेसे छोटा और बडेसे बडा ब्रह्म है स्वयंप्रकाशस्वरूप समस्त जगत् प्रपञ्चको विषय करनेवाला ऐसा प्रतीत होताहै इसमें प्रमाण है कि ॥

"यतो वाचो निवर्त्तन्ते अप्राप्य मनसा सह" ॥ इति श्रुतिः जिस ब्रह्मको न प्राप्त होकर अर्थात् ब्रह्मके पास न पहुंचकर मनके सहित वाणी उलट आती है तात्पर्य यह है कि, ब्रह्म मन वाणीकाभी अविषय है ब्रह्म केवल साक्षीस्वरूप है इस में प्रमाण है कि—

"जाग्रदवस्थासाक्षिसुषुप्त्यवस्थासाक्षि पंचकर्मेन्द्रियसाक्षि पंचज्ञानेन्द्रियसाक्षि पंचमहाभूतसाक्षि अन्तःकरणचतुष्टयसाक्षी" इतिश्रुतेःअत एव वासुदेवनामानन्तकोटिब्रह्माण्डसाक्षिभूतोनन्तकोटिब्रह्माण्डप्रतिपालकोऽनन्तकोटिब्रह्माण्डहर्त्ता बृहत्त्वाद्ब्रह्मशब्द उच्यते ॥

जाग्रत्अवस्था और सुषुप्ति अवस्थाका साक्षि अर्थात् जाननेवाला पांच कर्मेन्द्रियोंका साक्षी पांच ज्ञानेन्द्रियों का साक्षी पञ्चमहाभूतोंका साक्षी और अन्तःकरणरूप मन बुद्धि चित्त अहंकार इस समुदायका साक्षी है यह श्रुतिप्रमाण है इसीकारण वासुदेवनामक असंख्यात ब्रह्माण्डका साक्षिरूप होकर और अनन्त क्रोड ब्रह्माण्डका प्रतिपालक और असंख्यात ब्रह्माण्डका संहारका कर्ता बृहत् होनेसे ब्रह्म शब्द करके कहा जाताहै. ॥

अत एव ब्रह्मशब्दः सर्वत्रानुस्यूतो ज्ञानमयश्चैतन्यमुच्यते "अहं ब्रह्मास्मि एतद्ब्रह्म ॐ तत्सत्यं सोयम्पुरुषश्चासावादित्य एकमेव तदिति विद्यत इति प्रज्ञाप्रतिष्ठितमात्रेण सत्यस्यापिहितामुखं योसावा-

दित्ये पुरुषः सोऽसावहं ॐ सत्यं खं ब्रह्म" इति श्रुतेर्वाक्येभ्यः प्रसिद्धं ब्रह्मेत्युच्यते ॥

इसीवास्ते ब्रह्मशब्द सर्वत्र व्यापक है और ज्ञानमय चैतन्य कहाता है "अहं ब्रह्मास्मि" मैं ब्रह्म हूं "एतद्ब्रह्म" यह दृश्यमान सब ब्रह्म है ॐकाररूप सत्यरूप सो यह पुरुष परमात्मा आदित्यरूप एकही विद्यमान है बुद्धिमें स्थित है सत्यमें शयन करनेवाला आदित्यरूप सो परमात्मा मैं हूं ॥ ॐ सत्यं खं ब्रह्म ॥ ॐकार रूप सत्यरूप आकाशके समान ब्रह्म है यह श्रुति कथन करती है इसके तथा उपरोक्त वाक्योंके प्रमाणसे ब्रह्म सर्वत्र प्रसिद्ध है.

उदरं ब्रह्मेति साकाराख्यमुपारभ्यते "हृदये ब्रह्मेत्यारोप्य ब्रह्म अयमेव" इति श्रुतेः ॥ अत एव केवलं शून्याच्छून्यतरं सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरं व्यापकाद् व्यापकतरं प्रकाशात्प्रकाशतरं ज्ञानाज्ज्ञानतरं नित्यान्नित्यतरं ध्येयात् ध्येयतरम् ईश्वरादीश्वरतरं तत्त्वात्तत्त्वतरं स्थूलात्स्थूलतरम् आनन्दादानन्दतरं सुखात्सुखतरं चैतन्याच्चैतन्यतरं रूपात् रूपतरं ज्योतिषो ज्योतिस्तरम् ॥ "ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते" ॥ इति स्मृतिवाक्येभ्यो ब्रह्मानिर्वचनीयम् ॥

पेट ब्रह्म है अब ये साकार उपासनाके अवलम्बसे कथन करतेहैं कि "हृदये ब्रह्मेति आरोप्य ब्रह्म अयमेव" इति श्रुतिः

हृदयमें ब्रह्मका आरोप करके यही ब्रह्म है यह श्रुति कहती है अतएव ब्रह्म निष्केवल है शून्यसेभी शून्य सूक्ष्मसेभी सूक्ष्म है व्यापकसे भी व्यापक प्रकाशसे भी प्रकाश और ज्ञानसे भी ज्ञान नित्यसे भी नित्य ध्येयसे भी ध्येय है ईश्वरसे भी ईश्वर तत्त्वोंकाभी तत्त्व स्थूलसेभी स्थूल और आनन्दसेभी आनन्द सुखसेभी अधिक सुख चैतन्यसेभी अधिक चैतन्य रूपसेभी अधिक रूप ज्योतियोंका ज्योति इसमें प्रमाण है कि, "ज्योतिषामपि तज्ज्योतिः तमसः परमुच्यते" इति ज्योतियोंका ज्योति और अन्धकारसे पर है इस स्मृतिके और उपरोक्त वाक्योंके प्रमाणसे ब्रह्म अनिर्वचनीय अर्थात् मनवाणीका अविषय है.

इदं ब्रह्म तादृशमेतदिति चतुर्द्धा भवेत् ब्रह्म तदित्येव ध्येयो नोचेद्विषयो भवेत्परोक्षञ्चेति शङ्कराचार्य्योक्तिश्च "वाङ्मनोगोचरातिगः" इत्यथर्वणवाक्यगतात्मशब्दनिर्णयेन काण्डत्रयं ज्ञानकाण्डं१ मन्त्रकाण्डं२ कर्म्मकाण्डं ३ ब्रह्मोपासनायै ह्युपयुज्यते परापश्यन्तीमध्यमावैखरीरूपेणाव्यक्तमपि ब्रह्मशब्दस्वरूपेणात्मानमभिव्यक्तङ्करोति ॥

इदं १ यह. ब्रह्म २ तादृश ३ वैसा एतत् ४ प्रत्यक्ष दृश्यमान प्रकारसे एकही चतुर्द्धा है ब्रह्म उसकाही ध्यान करना चाहिये नहीं तो विषय वासना लगेगी और अपरोक्ष ब्रह्म

परोक्ष होयगा यह शङ्कराचार्यजीमहाराजनेभी कहा है. "वाङ्मनोगोचरातिगः" ब्रह्म मन वाणीका अविषय है इस अथर्वण वेदके अयमात्मा ब्रह्म इस वाक्यके आत्माशब्दके निर्णय करनेसे ज्ञानकाण्ड मंत्रकाण्ड और कर्मकाण्ड ये तीनों काण्ड ब्रह्मकी उपासनामें ही गतार्थ हुए परा पश्यन्ती मध्यमा और वैखरीवाणीके स्वरूपसे अव्यक्त (गुह्य) ब्रह्मभी शब्दस्वभावसे आत्माको स्फुट करताहै॰

अथर्वणवेदसांख्यदर्शनपातञ्जलदर्शनोपदर्शन-मन्त्रशास्त्राणीति संक्षेपात् ब्रह्मस्वरूपं निरूप्य वेदान्तप्रकरणेऽथर्ववेदवाक्यगतात्मशब्दानिर्णयो नाम पञ्चदशः सिद्धान्तः ॥१५॥ इति श्रीमत्परम हंसपरिव्राजकाचार्यशङ्कराश्रमैः कृतं द्वादशमहा-वाक्यविवरणं संपूर्णम् ॥

इति द्वादशमहावाक्यविवरणम् ॥ शुभम् ॥

अथर्वणवेद सांख्यशास्त्र योगशास्त्र उपशास्त्र मन्त्रशास्त्रादिकोंका आश्रय लेकर संक्षेपसे ब्रह्मके स्वरूपका निरूपण किया वेदान्त प्रकरणमें अथर्ववेदके वाक्य अयमात्मा ब्रह्म इसके अन्तर्गतके आत्माशब्दके निर्णयका पंदहरवां सिद्धान्त समाप्त हुआ १५ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकव्याघ्रचर्म्भाम्बरीणविद्याविनोदा-शुकविव्याकरणाचार्यस्वामिरामकृष्णानन्दगिरिकृता महावा-क्यविवरणस्य मिताक्षरा भाषाटीका समाप्ता ॥ शिवम् ॥

॥ ॐ सत्यमेव विजयते नानृतम् ॥

